अंतर्कथा

वल्लभ डोभाल

नदी के उस पार, घाटी में सुबह-शाम नागा बाबा की नागफणी बजती है। नागफणी की तीखी आवाज आस-पास पहाड़ियों से टकरा कर हवा में गूंजती है और जड़-चेतन में विलीन हो रह जाती है।

फिर शंख, घड़ियाल और नगाड़ों के निनाद से सारा वनप्रांत निनादित हो उठता है। देर तक स्वस्ति-वाचन और वेदवाणी से दिशाएं गूंजती हैं। फिर सर्वत्र शांति···शांति···। परम शांति का वातावरण···।

ज्योतिर्मठ का यह उत्तरी भाग। प्रकृति के सौंदर्य को सहज उजागर करने वाला परिवेश···। धरती की सारी सुंदरता को जैसे यहीं खोलकर बिखेर दिया है। एक ओर यह नैसर्गिक छटा छा रही है। दूसरी ओर घाटी की तह में बसी हुई है—किन्नर नगरी। अंगूठी पर सुशोभित नग की तरह···। बांज-बुरुंश और हरित लता-गुल्मादि से परिवेष्टित पर्वत का यह कोना है। कालाबन और उसके पीछे खड़ी है, बर्फ-लदी पहाड़ियां···। किन्नर प्रदेश की रक्षा के लिए मानो चांदी की दीवार खड़ी कर दी हो।

इन दिनों घाटी का तराई वाला भाग बुरुंश के लाल फूलों से दहक रहा है। इस बुरुंश-बन से लगकर बसी है, किन्नर नगरी। शीतल, सुखद और समृद्ध···। भावुक लोगों को किन्नर नगरी—यह नाम पसंद है। प्रकृति-प्रेमी लोगों ने इस किन्नर प्रांत के उन्नत वक्ष पर छोटे-बड़े घर बना लिए हैं। प्रायः गर्मी के मौसम में, जब कि बद्री-केदार-धाम की यात्रा आरंभ होती है तब यहां रास्ते-पगडंडियों पर लोगों की भीड़ उमड़ आती है। तरह-तरह के लोग दिखाई देते हैं। देश-विदेशों से आए हुए, भक्ति और अध्यात्म से प्रेरित—निर्मल, स्वच्छ मन और तन के धुले हुए लोग।

इस कालेबन के बीचों-बीच एक पगडंडी उभरती है और आगे चलकर सांप की लपलपाती जीभ के मानिंद दो हिस्सों में बंट जाती है। एक ओर कम ऊंची पहाड़ी पर बना डाक-बंगला, देवदार और बांज के सपाट पेड़ों की छांव में दुबका

है, दूसरी ओर आस-पास बसे गांव अपनी सादगी के कारण सबको आकर्षित करते लगते हैं। इस घाटी के बीचों-बीच एक खुला मैदान है। ऊंची-नीची पहाड़ियों पर प्राकृतिक-समतल पसरा हुआ धरती का यह टुकड़ा, अपने आप में एक विशेषता लिए हुए है। इस स्थान का महत्त्व इसलिए भी है कि यात्रा-काल मे दुनिया के हर कोने का आदमी यहां अपनी स्वाभाविक वृत्ति में दिखाई दे जाता है। यहीं से शैलराट् हिमालय की धवल शृंखलाओं के अनायास प्रथम दर्शन पाकर यात्री गद्-गद हो उठता है और अपनी आंखों को सार्थक हुआ पाता है। ऐसे अवसरों पर सांस्कृतिक कार्यक्रम और मेले-उत्सव आदि, आयोजन इसी मैदान में होते हैं। दुनिया के लोगों का संगम, अध्यात्म के नए अध्याय और देश-विदेश की खबरें, जैसे कि इस मिट्टी की तह में बंद हैं। मैदान के दूसरे छोर पर—जहां से एक पहाड़ी आकाश की ओर उठती है, एक बड़ा आश्रम बना है। यहीं पर भगवान त्रिनेत्र का विशाल मंदिर है। आश्रम के अंतर्गत साधु-संतों के ठहरने की व्यवस्था है। हर तरह की सुविधा पा जाने के कारण आश्रम में साधु-संतों का आवागमन रहता है। व्यवस्था का संपूर्ण उत्तरदायित्व यहां के महंतजी पर है। यात्रा-काल के प्रारंभ होते ही त्रिनेत्र आश्रम द्वारा इस मैदान में कार्यक्रम शुरू किए जाते हैं। महीनों तक ये कार्यक्रम चलते हैं। इन दिनों बड़े-बड़े भजनानंदी भजन-कीर्तन का आयोजन करते हैं। कहीं हरिकथा और अखंड पाठ का कार्यक्रम चलता है। कहीं वेद-वेदाङ्गों पर भाष्य और अध्यात्म चिंतन पर चर्चा हो रही है, तो कहीं धर्मशास्त्र कथा-प्रवचन का पारायण है। यात्रा-काल समाप्त होने के बाद भी समय-समय पर इस प्रकार के कार्यक्रम होते रहते हैं। जीवन के समस्त भोगों को प्राप्त कर चुकने के बाद वृद्ध-जनों की आध्यात्मिक वृत्तियों को यहीं समाधान मिलता है।

जीवन के अंतिम चरण पर आ ठहरने वाले व्यक्ति के मन में बराबर यही इच्छा शेष रह जाती है कि कुछ क्षण के लिए कहीं शांति मिले। शांति की खोज में लोग सब जगह पहुंचने लगे हैं। ऐसे वातावरण में भी यदि शांति नहीं मिलती, तो फिर कहां शांति मिलेगी।

सुबह-शाम नागा बाबा की नागफणी और अनेक वाद्यवृंदों की सम्मिलित गूंज चारों ओर फैली एकांतता को सजीव करती है। यह नाद-ब्रह्म जैसे कि शांति को भंग नहीं करता, बल्कि वातावरण को और भी गंभीरता प्रदान करता है। सुन

कर आत्मा तृप्त हो रहती है।

सुबह-शाम नागा बाबा की नागफणी बजती है। सायरन-सी तीखी आवाज, बंद मकानों की परतों को खोल रजाई-गदेलों की गुडमुड़ में अलसाए, औरत-मर्द जिस्मों में प्रवेश करती हुई सीधा दिल के पास पहुंचती है। इस आवाज के साथ जड़-चेतन सजग हो उठता है। आस-पास गावों के लिए यह आवाज चौथे पहर की समाप्ति का संदेश देती है। औरतें उठकर अपने काम में लगती हैं और फिर धीरे-धीरे कर्मक्षेत्र में एक बहाव-सा आने लगता है। शाम होती है फिर वही आवाज…। सूरज के डूबने-उगने की तरह इस आवाज का भी नियम है। यह आवाज बड़ी सार्थक है। जिस दिन नागफणी की आवाज कानों में नहीं आती, उस दिन सुबह होने पर भी सुबह हुई मालूम नहीं देती। लोगों में चर्चा होने लगती है—आज नागा बाबा की नागफणी नहीं बजी। जाने क्या हुआ। कहीं बीमार तो नहीं पड़ गए?

लेकिन जब से महाराज यहां पधारे हैं, शायद कभी ऐसा हुआ हो। बीमारियां तो गिरस्तियों के लिए बनी हैं, जोगी-जोगटों को काहे की बीमारियां…। हां, एक बार नागा बाबा बीमार हुए थे। सबको मालूम है कि तब बाबा ने अपने लिए समाधि तैयार करवा ली। अपने भक्तों से बाबा बोले—"शरीर अगर छूट गया तो इस गड्ढे में डालकर ऊपर से मिट्टी ढांक देना बच्चा लोगो…।" उन दिनों बाबा ने अपने चेले से नागफणी को बजवाया। चेला नागफणी में वैसी आवाज कहां से फूंक सकता है जैसी कि नागा बाबा पैदा करते हैं। बाबा को आदत है, तरीका आता है। खूब लंबी सांस लेकर खींचना पड़ता है, ताकि वह सायरन की तरह बज उठे।

चीना जब घर में रहता है, तो इस आवाज को सुनकर कहता है—"नंगे साधू का सायरन बज उठा है।" चीना कभी साधु-संतों के पास नहीं जाता। उनसे डरता भी नहीं। उसके विचार में संत बन जाना बड़ी बात नहीं है। बीवी-बच्चे अगर नहीं, तो आदमी संत ही बनेगा। पर बीवी-बच्चों के साथ रहते हुए यदि कोई संत बनता है तो उसे हम मानते हैं।

लोग कहते हैं कि चीना पागल है। अरे बीवी-बच्चों के साथ रहते हुए कोई संत कैसे बन सकता है?

"बन क्यों नहीं सकता?" चीना उन्हें समझाता है। "संत बनना बड़ी बात

नहीं। आदमी कोशिश करे, तो गृहस्थ जीवन में भी उस चीज को पा सकता है जिसके लिए ये जोगी-जोगटे संन्यास लेते है और दर-दर भटकते फिरते हैं।"

चीना के सिर मे भूत की तरह जब कोई चीज सवार हो जाती है, तो फिर जल्दी से उतरती नही। उसका कहना है कि अगर ऐसी ही बात है, तो संतों का बस्ती में क्या काम है? उन्हें जंगलो मे रहना चाहिए। पहाड़ की किसी गुफा के अदर या नदी के एकात किनारो पर वास करना चाहिए। लेकिन नही, ये लोग संत कहां है? दुनिया के चक्करों मे ये भी पड़े हुए है। लोभ-लालच से बंधे हैं और जाने कहा-कहा खप रहे है। संत समागम और उनके अध्यात्म की महिमा को चीना अपने ढंग से पेश करता है। नागा बाबा से चीना कुछ तो डरता ही है। संत का स्वभाव क्रोधी नही होना चाहिए। चीना की कुछ बातें तो समझ में आती है। शुरू-शुरू मे जब बाबा यहा आए थे, तो त्रिनेत्र आश्रम वालों ने उन्हे ठहरने की जगह दी। सब तरह की सुविधाएं इस आश्रम मे मिलती हैं। हर वक्त साधु-संतो का समागम रहता है। जैसा महात्मा, वैसी सेवा और आदान-प्रदान का भाव है। त्रिनेत्र आश्रम के महत श्री नीमगिरीजी को राजयोगी की उपाधि मिली है। उनकी योग-साधना के फलस्वरूप त्रिनेत्र आश्रम का अपना महत्त्व बना है। साधक लोग हफ्तो-महीनो यहा आकर योगाभ्यास करते हैं और अपनी साधना को चिरंतन बनाते है।

महंतजी से सब तरह के लोगों का साक्षात्कार नही होता। वे साधु-संत और जनता के सामने कभी नही आते। यदि कोई खास तरह का विचार-विमर्श करना हो तो आज्ञा मिलने के बाद ही उनसे मिलने दिया जाता है। आश्रम की हर जानकारी उन तक पहुचाई जाती है। आश्रम की संपूर्ण व्यवस्था उन्होने सेवादारों के हाथ दे दी है।

चीना तो त्रिनेत्र आश्रम के महंत को भी नही मानता। उसका कहना है कि महंतजी पूंजीवादी विचारधारा के संत हैं। पूंजीवाद क्या है, इस बात को वह अक्सर लोगों को समझाता है। समाजवाद, साम्राज्यवाद, राष्ट्रवाद, पूंजीवाद··· जाने क्या-क्या कहता है। उसका कहना है कि पूंजीवाद का दूसरा रूप पाखंडवाद मे मिलता है। त्रिनेत्र आश्रम मे पाखंडवाद चलता है। उसे महंतजी का पूंजीवादी होना अखरता है। इस आश्रम मे इतना पैसा कहां से आता है? महंत जी जरूर किसी चक्कर में है। अब ये बाबा लोग भी कुचक्री बनते जा रहे हैं।

इस तरह बे-बुनियादी बात पर एक बार नागा बाबा ने चीना पर चिमट फेंक मारा। नागा लोगों की क्रोधाग्नि···। चीना को क्या मालूम था कि ये लोग इतने क्रोधी होते हैं। उस दिन चीना भाग खड़ा न होता, तो आज वहीं कहीं चीना की समाधि देखने में आ जाती। नागा बाबा उसे मोक्ष-धाम पहुंचा देते। यह चीना भी कम कुचक्री नहीं। इसे भला क्या लेना-देना है, कोई कुछ करे। अपनी इच्छा के मुताबिक आदमी सब कुछ करता है। कोई किसी धर्म में है, कोई किसी पार्टी में है, कोई संस्था चला रहा है, कोई देश-सेवा के काम मे लगा है। सबके अपने-अपने काम हैं, अपने धंधे हैं। इन लोगों को छेड़ने की भला क्या जरूरत है। लेकिन चीना का कहना है कि ये सब बातें आदमी से आदमी को अलग करने की हैं, जोड़ने की ये बातें नहीं हैं। न जाने चीना के दिल मे रह-रहकर कैसा दर्द उठता है। वह आदमी की एकता चाहता है। सब लोगों को एक तरह का देखना चाहता है। सब लोग मिलकर रहें मिलकर काम करें। एक तरह का खाना-कपड़ा सबको मिले। एक तरह का रहन-सहन हो, तभी कुछ बन सकता है। एकता की बात उसके मन में है? यह अच्छी बात है, पर इस हिसाब से तो खीमू मिस्त्री और बद्री-केदार के पंडे में कोई भेद नहीं रह जाता। आखिर सब कुछ एक बराबर कैसे हो सकता है? चीना का कहना है कि इस भेदभाव को मिटना चाहिए। इसे मिटाना जरूरी है। यह सबके फायदे की बात होगी। कभी-कभी तो चीना की बातें बिलकुल सटीक लगती हैं।

नागा बाबा बिगड़ा हुआ आदमी है, वह क्रोधी महात्मा है। महंतजी पूंजी-वादी हैं और दूसरे महात्मा लोग भी कुचक्रों के शिकार बने हुए है। इस पर्वत प्रांत की भोली जनता पर ये लोग किसी-न-किसी रूप में हावी है। अपने पाखंड के कारण गुलछर्रे उड़ा रहे है।

चीना की बातें लोगों की समझ में नहीं आती। जो लोग समझते हैं, वे समझकर भी समझने को कोशिश नहीं करते। चीना की बातों को वे लापरवाही के साथ भूल भी नहीं जाते। साधु-संतों को धन की क्या आवश्यकता है? दो जून रोटी चाहिए—वह कहीं भी मिल सकती है। लेकिन यहां इन लोगों को जमा करने की आदत पड़ गई है। इतना जमा कर रखते है, जितना कि गृहस्थियों के पास भी नहीं होता। तिस पर भी इच्छाएं बढ़ती जाती है। ज्यादा-से-ज्यादा संग्रह करने की फिक्र मे रहते है। इनकी बातें चीना को बिलकुल पसंद नहीं।

संत को क्रोध करना शोभा नहीं देता। नागा बाबा क्रोधी महात्मा हैं। शुरू में इस महात्मा ने त्रिनेत्र आश्रम में हंगामा खड़ा कर दिया था। लोगों को नागा बाबा से इसी बात पर हमदर्दी है कि उसके साथ त्रिनेत्र आश्रम वाले महंतजी ने अच्छा बर्ताव नहीं किया।

शुरू में नागा बाबा इसी आश्रम में आए थे। नागा लोग नंगे होते हैं। लंगोट और एक चुटकी भभूत के अलावा इनके पास होता ही क्या है! पर बस्ती में रहने के कारण नागा बाबा को अल्फी ओढ लेनी पड़ी। उज्जैन के नामी अखाड़े में दीक्षा लेकर वहीं जोग धारण किया और फिर चल पड़े देशाटन के लिए। चारों धाम यात्रा कर चुकने के बाद यदि कोई साधु अपना एक निश्चित आश्रम बना लेना चाहता है, तो उसके लिए गुरु-आज्ञा लेना जरूरी नहीं। लेकिन चारों धाम जब तक सिद्ध नहीं होते, एक जगह टिकना उचित नहीं। नागा बाबा ने अभी चारों धाम यात्रा नहीं की। चले तो थे चारों धाम करने…। पर बद्री-केदार की इस भूमि पर कदम रखते ही यात्रा स्थगित हो गई। आज भी जब बाबा गुस्से की डगर में होता है तो त्रिनेत्र आश्रम की तरफ उंगली उठाकर स्पष्ट कह देता है—"इस कुचक्री महात्मा ने हमको यहां बांध के रख दिया है। इसने हमारी भक्ति-भावना को भिरष्ट किया है। हमारी यात्रा में अड़ंगी मार रखी है।" नागा बाबा का संकेत त्रिनेत्र आश्रम के महंत की तरफ होता है।

"यह हमारा गुरुभाई है। हम लोग एक ही अखाड़े के चेले हैं, एक ही गुरु के…एक ही पथ के…। यह महात्मा हमसे पहले चला आया था। चारों धाम सिद्ध करके यहां बैठ गया है। अब यह महात्मा नहीं रह गया है। बड़ा आदमी बना है…।" कहते हुए दूसरे ही क्षण नागा बाबा का क्रोध शांत हो रहता। नागा बाबा इसी बात पर यहां टिक गया है कि महंतजी ने अपने इस गुरुभाई को दर्शन क्यों नहीं दिए। आज ही यदि उनके दर्शन मिल जाएं, तो नागा बाबा फौरन अपना दंड-कमंडल उठाकर चलता बने। बस, इतनी-सी बात है। यही जिद है जिसके कारण बाबा को त्रिनेत्र आश्रम के बराबर अपना आश्रम जमा लेना पड़ा है।

तब त्रिनेत्र आश्रम में दो हफ्ता समय गुजार लेने के बाद नागा बाबा के जमाती आगे बढ़ने को तैयार हुए। चलते समय बाबा ने दर्शनों की इच्छा प्रकट की। लेकिन सेवादारों ने यह कहकर कि महंतजी के दर्शन हर किसी को सुलभ

नहीं, नागा बाबा को दर्शनों से वंचित कर दिया। नागा बाबा ने जिद की और बताया कि वे मेरे गुरुभाई हैं। वे सिद्ध योगी हैं, इसलिए उनके दर्शन करना यात्रा सफल करने के बराबर है। लेकिन सेवादारों ने उनकी बात जैसे सुनी ही नहीं। सिद्ध पुरुषों के दर्शन इतनी आसानी से कैसे प्राप्त हो सकते हैं ? जिस पर प्रभु की कृपा होती है, वही दर्शन-लाभ करता है।

चीना का कहना है कि इस तरह सरलता को जटिल बना देना भी एक तरह का पाखंड ही है। आदमी के लिए आदमी के दर्शन करने में क्या कठिनाई है ? उसे जान-बूझकर कठिन बनाया जाता है। ऐसे पाखंड रचकर, आम आदमी के लिए एक आदमी के दर्शन दुर्लभ बनाकर, उससे लाभ हासिल किया जाता है। यह शोषण का धार्मिक तरीका है।

चीना की बातों में कितनी सच्चाई है। इसी बात पर एक दिन पांडे गुरु ने उसे निरुत्तर कर दिया था। चीना की बात को पांडेजी अच्छी तरह जानते हैं। उन्हें मालूम है कि यह आदमी विरोधी पार्टी में रह चुका है, वह कभी चीनी खेमे का वर्कर था। उस दिन पांडेजी ने साफ कह दिया—"अगर ऐसी ही बात है तो साम्यवादी देशों में तुम्हारी पार्टी के लोगों ने क्या बना के रखा है ? सुना है, वहां की जनता अपने नेताओं के दर्शन किए बिना ही मर जाती है। नेता लोग कभी जनता के सामने नहीं आते।"

उस दिन चीना की बोलती बंद हो गई। कोई उत्तर देते न बना। पर नागा बाबा के साथ वह ऐसी बातें करने में नहीं चूकता। बाबा को साधारण महात्मा जानकर, धर्म-कर्म की बात शुरू करते हुए राजनीति पर उतर आता है। रोज ही बाबा के धूने पर बैठकर चर्चा होती है। बाबा की भक्ति में विश्वास रखने वाले लोगों के बीच, वह धर्म-दर्शन पर अपना भाषण शुरू कर देता और धीरे-धीरे खंडन-मंडन पर उतर आता।

चीना में बोलने की हिम्मत है। अपने सामने दूसरे को वह कुछ बोलने नहीं देता। यह बात नहीं कि वह जो बोलता है, सभी कुछ ठीक है। न बोलने वालों के बीच एक बोलने वाला यदि गलत-बयानी करता है तो उसी को लोग कुछ-न-कुछ मान लेते हैं।

तब चीना दिल्ली से लौटकर आया था। सन् उन्नीस सौ पैंतालीस से पहले की बात···। तब वह घर से भाग निकला कि वर्षों तक लापता ही बना रहा। घर

में पिता थे नहीं कि चीना की खोज-खबर होती। अकेली मां के पास रोने के अलावा दूसरा चारा ही क्या था। जब तक वह रही, अपने चुन्नी को याद करती रही। आखिर एक दिन वह भी चल बसी।

इतने लंबे समय के बीत जाने पर चीना की याद लोगों के दिलों में कैसे रह सकती है ? पंद्रह वर्ष का समय किसी को भूल जाने के लिए बहुत होता है। लोग उसे भूल गए हैं। लोगों का भी इसमें क्या दोष है। अपने-अपने भाग्य की बात है। कौन जानता है कि किसके भाग्य में क्या लिखा है। चीना के भाग्य में यही था। गांव में आवारागर्द घूमता हुआ लड़का किसे अच्छा लगता है ! चीना आवारा नहीं था। गांव के लोग ही तंगदिल हैं। गरीब होना एक बात है और तंगदिली दूसरी चीज है। नासमझी का भी अपना दायरा है। ये सब बातें जहां आदमी के स्वभाव में पल रही हों, वहां का आदमी कैसा होगा !

गांव में अनेक तरह की तंगियों के कारण टूटे हुए इस परिवार में चीना ने क्यों जन्म लिया ? यह बात उसके दिमाग में बराबर रही है। गरीब के लिए इस दुनिया में क्या धरा है, जहां अपना घर भी अपना-सा नहीं लगता। गरीबी-अमीरी की चर्चा सनातन बनी है। यह सवाल सब जगह खड़ा हो जाता है। आदमी की माप-तौल के ये दो ही पलड़े हैं। हर बात का निर्णय इन्हीं पलड़ों पर तय है। यह बात नहीं कि गांव में सब समझदार लोगों की कमी थी। पुराने लोग जब कोई बात कहते, समझाकर कहते। वे पढ़े-लिखे नहीं थे, पर पढ़ाई-लिखाई वालों से ज्यादा समझ उनमें थी। बात कहते थे कि पत्थर पर लकीर खिंच जाती। तिरलोचन शास्त्री ने एक बार पंचायती चौक में सात दिन का सप्ताह रचाया था। ऐसे ही मौके पर ज्ञान-ध्यान की बातें सुनने को मिलती हैं। तब तो वह कितनी ही बातें समझा गए। गरीबी-अमीरी की बात भी उठी थी। जी-भर किस्से-कहानियां सुनाने के बाद शास्त्रीजी ने कहा था—"दुनिया में सब चीजें आदमी के लिए बनी है, इसलिए किसी चीज से घृणा नहीं करनी चाहिए। यह आदमी की अपनी कमजोरी है कि वह मन में भेदभाव रखता है। आदमी आदमी के बीच दीवारें खड़ी कर दी हैं। गरीबी-अमीरी, ऊंच-नीच का भेद बनाया है। सुख-दुःख भी आदमी के लिए बने हैं। इन सब चीजों पर आदमी विजय पा सकता है। उसके अपने ही अंदर बड़ी-बड़ी शक्तियां काम करती हैं। मन है, जहां कि विष भी अमृत में बदलता है और अमृत से हलाहल पैदा होता है। लेकिन यह सब

कुछ समझ के द्वारा ही हो सकता है। दुःख-तकलीफों का मुकाबला भी मन की शक्ति के जरिए किया जा सकता है···।" ऐसा शास्त्रीजी कह गए। पर उनके कहने से भी गांव के आदमी में कितना ज्ञान आया है। ज्ञान-ध्यान के लिए भी लोग पैसे की जरूरत महसूस करते हैं। आदमी के पास पैसा हो, तो सब कुछ अपने आप चला आता है। वरना आदमी अक्ल से भी जाता रहता है। इन गाव वालों को कब अक्ल आएगी। इनकी अक्ल को गरीबी ने मार दिया है। जैसे सूखा पड़ने पर फसल मारी जाती है। ज्ञान और अक्ल के सूखे ने दिमाग मे घास उगा दी है। घास चरने वाला पशु भी बिना छेड़े सीग नही मारता। पर ये लोग··· पशुओं से भी ज्यादा कुछ है। चीना पर लगने वाला लांछन···। ऐसी-ऐसी बातें कि बस···। हर वक्त ऐसे घृणा वाले वातावरण में कैसे रहा जा सकता है। चीना तब चौदह वर्ष का रहा होगा। गरीबी की मार खाया हुआ, भूखा-प्यासा और थका-हारा···एक दिन गांव छोड़कर भाग निकला और फिर वर्षों तक उसका कहीं पता न चल सका।

चीना का गांव से चला जाना गांव की औरतों के लिए दुःखद घटना बन गई। वे चीना को कैसे भूल सकती है? गांव के बच्चे भी उसे अपने बीच न पाकर उदास बन गए! यकायक कभी खेल के बीच उसकी याद ताजा हो आती, तो सारा खेल नीरस लगने लगता। बच्चे एक जगह इकट्ठे ही बैठ जाते। आपस में बातें करते—कहां गया होगा? क्या खाता होगा? पता नही, है भी या मर गया है? उसकी याद टीस बनकर सबके दिलों को कचोटती है। गांव की औरतो को भी वह भूलता नही। जैसे कि मरने के बाद अपना कोई याद आता है। याद करते हैं और रो लेते हैं। उसके गुण-अवगुणों का बखान करते हैं। लगता है, मृत्यु ही जीवन की कसौटी है। इस कसौटी पर आदमी की भली-बुरी बात सामने आती है। लेकिन मरने के बाद क्या अच्छा, क्या बुरा···। आदमी के रहते हुए उसकी अच्छाई-बुराई का फैसला हो सकता, तो उसमें खराबियां क्यों पैदा होतीं!

गाव की औरतें चुन्नी को याद करती हैं। जब वह गांव में था तब कौन-सा काम उसने नही किया। गांव की बहू-बेटियों के साथ वह घास-लकड़ी के बहाने जंगल-जंगल घूमता रहता। अकेले चीना को सारे परिवार का प्यार इन्ही औरतो से मिलता। आरम्भ में उन्हें चीना की उपस्थिति अपने बीच अच्छी नहीं लगी। वह मर्द-बच्चा है। चौदह वर्ष की उम्र मे सब कुछ समझ आता है। इसलिए

चीना के साथ रहने से आपसी बातों का मजा जाता रहता है। औरतों के बीच उसका क्या काम! लेकिन बाद में जब चीना उनसे खूब हिल-मिल गया, तो सबकी हिचक जाती रही। तब कोई भेदभाव उनके बीच नहीं रह गया था। अपनी आपसी चुहल में वे कभी चीना को ही पकड़ लेतीं और उसे अधनंगा बना कर छोड़ देतीं। चीना को नंगा करने में कितना मजा आता था। उनकी पकड़ में आकर वह अपने को सिकोड़ने की भरसक कोशिश करता। पर इतने सारे हाथों से वह बच भी कैसे पाता! औरतें उसका पाजामा खोलकर अपने पास रख लेतीं और फिर हंसते-हंसते लोटपोट हो रहतीं। सबके लिए चीना एक तमाशा बन गया था। नंगा कर देने वाली बात पर वह उन्हें हलकी-फुलकी गालियां सुना देता, कभी रोने लगता और कभी झाड़ी में घुसकर अपने नंगेपन की रक्षा करता। उसे नंगा करने में जो अपनत्व का भाव था, उसे चीना भी कभी नहीं भूल सकता।

गांव की औरतें घास-लकड़ी के लिए जंगल जातीं, तो चीना को साथ ले जातीं। किसी ऊंचे पेड़ पर उसे चढ़ा दिया जाता। वह हलका बदन…बंदर की तरह लपककर पेड़ की आखिरी मंजिल तक पहुंच जाता और थोड़ी देर में सारा पेड़ पत्तों से रहित हो जाता। एकदम खंखड़…। नीचे घास के ढेर लग जाते। बैठे-बिठाए घड़ी-पल में इतना घास कहां से मिल सकता है! चीना है, जिसके कारण गांव के इकले-दुकले घर की औरतों को यह सुविधा मिल गई थी। इन औरतों को वक्त से घर पहुंचना है, बीसों काम करने हैं। जल्दी घर लौटने की खुशी में उसे जुग-जुग जीने का आशीर्वचन देती हैं। लेकिन जब कभी चीना का दाव लग जाता, तो वह भी उन्हें कई तरह के नाच नचा देता। ऊंचे पेड़ की आखिरी मंजिल पर, किसी एक टहनी से दोनों पांव नीचे छोड़कर बैठ जाता। घोड़े की-सी पीठ पर निश्चिंत सवार हो, जेब से बीड़ी का टुकड़ा निकाल खूब लंबे कश खींचता। नीचे से औरतों के चीखने-चिल्लाने की आवाजें सुनता रहता। "क्या करता है रे…काटता क्यों नहीं…?" पत्तों के बीच बैठा हुआ चीना कहीं दिखने में भी नहीं आता। ऊपर से केवल आवाज आती है, "काटता हूं चाची, जरा बीड़ी पी रहा हूं।"

बीड़ी पी चुकने के बाद भी चुपचाप बैठा कुछ सोचता रहता है। नीचे से जब कई आवाजें एक साथ उठती हैं, तो सुनते हुए भी अनसुनी करने के बहाने वह

अपना गीत शुरू कर देता—

वजरू पड़्यान परदेसु ब्वै······
अपणो विराणो ह्वै······।

ऊंचे पेड़ की आखिरी मंजिल पर, पतली शाख को वह एक हल्की हिलोर देता। पेड़ की लचीली शाख हवा में झूमने लगती। तब वह अपने गीत की लय को खूब लंबी खींचकर हवा मे सहरा देता। आस-पास की पहाड़ियों से यह आवाज टकरा कर वापस लौट आती। उसके कंठ मे लोच थी, आवाज मे दर्द होता। लोग यों भी पाम बिठाकर उससे गीत-भजन सुन लेते और उसकी आवाज में तन्मय हो जाते। एक बार पट्टी के पटवारी और कानूनगो साहब कहीं तहकीकात पर जा रहे थे। यही लय उनके कानों में पड़ी। कदम वही जाम हो गए। अहः! कैसा दर्दीला गीत है। लय भी खूब सुदर! समतल में बहने वाली नदी की तरह···। मतलब भी ऐसा कि छाती को चीरकर रखने वाला—वजरू पड़्यान परदेसु ब्वै···। उस परदेस में बिजली गिर पड़े, जल जाए उस धरती का सीना···शहर की वह चकाचौंध वीराने में बदल जाए, जहां जाकर आदमी बेगाना बन जाता है। अपने घर-द्वार तक को भूल जाता है।

पेड़ की जड़ में बैठी हुई घसियारनियों को तो जैसे नानी मर गई हो। "क्यूं गाता है रे ब्यटा ऐसा गीत···? दिल में दर्द पैदा करता है यह। तेरी आवाज भी कैसी भीगी-भीगी लगती है। इस गीत को मत गाया कर! आंखों में आसू भर आते हैं। अब जो आदमी परदेश चला गया है वह रोने से वापस नही आएगा। हमारे भाग मे ऐसा ही है। वर्षो गुजर जाते हैं, घर का आदमी घर नही लौटता।" गांव की औरतें सोचती हैं कैसा होगा वह परदेश···। जहां पहुंचकर आदमी अपने बाल-बच्चों तक को भूल जाता है। लेकिन अब चीना के वे रुलाने-हंसाने वाले गीत भी कहां हैं! जब से वह गांव छोड़ गया है, सूना-सूना लगता है। उन गीतों को सुनने के लिए कान तरसते हैं। जंगल का कोई ऐसा किनारा नही, जहां पहुंचकर उसकी याद ताजा न हो आती हो। खेत-खलिहान, घाट, पनघट, घर, जंगल··· सब जगह आखें उसे खोजती है। सब जगह उसका कोई-न-कोई गीत गूंजता है। लेकिन वह कही दिखने में नही आता।

ये मर्द लोग भी कितने कठोर-दिल हैं। लड़कों को उचका कर, गांव से

भगा देते हैं। नई उम्र में आकर शौक सभी को लगता है। अच्छा खाना-पहनना कौन नहीं चाहता। लेकिन ये लोग···। इनका मुख कभी बंद नहीं रहता। कुछ न कुछ जरूर बोलना है। कुछ बोलने के लिए मुंह खुजाता रहता है। ऐसे वातावरण में दमघुट कर रह जाता है।

चीना गया। फिर वर्षों तक उसका कहीं पता न चल सका। पता करने वाला भी कौन था, जो दिल में दर्द लेकर खोज-खबर करता। इन गांवों से निकल भागने वालों का पता किसने चलाया है। लोग कहते हैं कि ये भागने वाले रवाईं जौंसार की तरफ जाकर अपना घर बसा लेते हैं। इस जगह जो एक बार पहुंच गया, वह फिर लौटने का नाम नहीं लेता। जादू के प्रभाव से उसे बांध लिया जाता है। भेड़-बकरी या कुछ और बनाकर छोड़ देते हैं। भेड़-बकरी वह चाहे न भी बने, पर घर-जवाई जरूर बनता है। ऐसी मोहिनी उसकी आंखों पर छा जाती है कि हिलने का नाम नहीं लेता। ऐसा लोग इस क्षेत्र के बारे में कहते हैं। जादू-टोने वाली धरती है यह···। चुन्नी भी शायद वहीं कहीं पहुंच गया है। लेकिन कुछ वर्षों के बाद वह एक दिन जब गांव लौटा, तो देखकर लोग आश्चर्य में पड़ गए। अब वह लम्बा-चौड़ा नौजवान खूब घनी काली मूंछें रखने लगा था। शरीर भी खूब गठा हुआ···।

बगल वाली चाची ने उसे अपने सामने पाया, तो बहुत प्रसन्न हुई। तब तो वह चीना को गले लगाकर खूब रोई। सिर से लेकर पीठ तक, कई बार दोनों हाथ फेरती हुई बोली—"बेटा! तू आ गया है, तो अब मुझे किसी तरह की चिंता नहीं है। घर-द्वार सब तेरा है। तू बिना कुछ कहे चला गया था। मुझे तेरा सब कुछ संभालना पड़ा। दूसरा कौन संभालता?"

चाची के मन में हजार आशंकाएं थीं। जाने क्या कहेगा? लेकिन चीना भला क्या कहता। उसे बचपन से ही घर-द्वार का मोह नहीं रह गया था। जिस मिट्टी में बचपन उपेक्षित रहा हो, उसके प्रति मन कितना रह सकता है। चाची से चीना ने सिर्फ इतना ही कहा की यह घर-द्वार अब भी तुझे ही संभालना है चाची! मेरा क्या है, कहां निकल जाऊं।

वर्षों पुरानी बात। एक दिन में ही परिवर्तन आ जाता है। वर्षों बाद गांव के लोगों ने जब चीना को देखा तो देखते रह गए। अब वह काफी बदल गया था। भरा पूरा जवान। भरे चेहरे पर घनी काली मूंछें देखकर आंखें अपने आप झुक

जवान अपनी घी की कुज्जियां उठाते। वे 'क्विकमार्च' कर गए। फौजी डिसेप्लिन के साथ हाथ हिलाते हुए दूर निकल गए। सोचा तो जरूर होगा उन्होंने कि यह आदमी फिर कोई काशन देगा। मंगत भला क्यों काशन देने लगा। वह सीधे उतर कर सड़क पर आया और घी की दोनों कुज्जियां उठाकर अपने घर का रास्ता लिया। अब तक जवान लोग जाने कितनी दूर निकल गए थे। तब से यह बात उनके दिलों में बराबर खटकती रही। अपने अंग्रेज अफसर से यदि वे इस घटना का जिक्र करते तो मंगत क्या उसका सारा गांव हथकड़ियों में बंधकर पौड़ी जेल में पहुंचा होता। लेकिन यह सोचकर कि चलो, अपने भाई-बिरादर हैं, कभी स्वयं जाकर खबर ले लेंगे। पिछली बार जब वे लोग मंगत की खोज में आए, तो मंगत इस दुनिया में नहीं था। बेचारा तभी चल बसा।

फौजी कायदे-कानून को लोग क्या समझते हैं। गांव के लोग हैं। गांव में देखने-सुनने को क्या रखा है। यही कि उलटी-सीधी बातें सुनते रहो। इसलिए गांव में दिल नहीं लगता। इससे तो फौज में भर्ती होना अच्छा।

फौज में चीना को सूबदारी का रैंक मिलने वाला है। सूबदारी जब मिले तब —लोग तो अभी से सूबदारजी! कहकर बुलाने लगे हैं।

"आओ, बैठो सूबदारजी!" अपने घर में दीवार की आड़ से लगी तिपाई पर सूबदारजी को बिठा कर दद्दा अपने हाथ से चिलम भर लाते हैं। हुक्के का पानी बदलते हैं, उसे मांजते हैं और फिर चिलम चढ़ाकर सूबदार की तरफ बढ़ाते हैं। "ल्यो, हुक्का पियो सूबदारजी!"

ये ही लोग हैं, जो तरह-तरह की बातें किया करते थे। गांव में रहना हराम कर दिया था और आज इज्जत से पास बैठाकर हुक्का पिला रहे हैं। देखकर चीना मन-ही-मन मुस्कराता है।

"मैं हुक्का नहीं पीता बोडाजी! सिगरेट पीता हूं।" चीना जेब में हाथ डालकर सिगरेट निकालता और उसे मूछों के अंदर मुंह में फंसाकर फर्र से दियासलाई रगड़ता। धुआं मूंछों से छन-छनकर फैलने लगता। लोग देखते रह जाते उसकी मूंछों की तरफ...। सूबदारजी की रोबीली मूंछें।

"लो बोडा, तुम भी सिगरेट पियो।" सिगरेट हाथ में लेकर दद्दा गुम हो जाते। बड़े गौर से उसे देखते। जीवन में पहली बार यह चीज हाथ आई है। वा! कैसी बनी है। अपनी मिरजई की सलवट में दद्दा उसे रख लेते हैं। पर नहीं

यहां भी यह टूट सकती है। सोचकर दद्दा ने उसे कनपटी पर टिका दिया। शाम तक वह सिगरेट कनपटी पर टिकी रही। शाम के वक्त चीना ने जब वही उसे टिका पाया, तो पूछा। दद्दा को तभी याद आया। कनपटी से उसे निकाल लिया और देखते हुए बोले, "बेटा, इस पर यकतरफा लंबर लगा है। मैं पूछना भूल गया था कि इसे लंबर वाली तरफ से पीना है या बगैर लंबर से ?"

सुनकर चीना को हंसी छूट गई। बोला, "यह सरकारी चीज नहीं है बोडा! प्राइवेट चीज है। इसे कहीं से पी लो, फर्क नहीं पड़ता।"

क्या जमाना था। कैसा अंधकार···। सफेद लट्ठे का पाजामा और कमीज पहन कर सुबह-शाम जब सुबदारजी हवाखोरी के बहाने निकलकर गांव की तरफ जाते, तो लोगों की आखें उनके चिट् उजले लट्ठे की चमक पर ठहर जाती। तब गांवों मे ऐसा सफेद कपड़ा कहा मिलता था! दुसूती का मोटा गाढ़ा, काले रंग की इटॅलीन और मलेशिया का मॅलखोरा···। बस, यही कपड़ा लोग पहचानते थे। बूढ़ी औरतों के लिए त्यूखी, हाथ का बुना कंबल···। इनके बिना गाव में गुजारा नहीं। अह! कैसा वक्त था।

उन्हीं दिनों गांव मे शम्भू का ब्याह हुआ। पैसे का नशा तब भी कम नहीं था। नशे में चालीस वर्ष का शम्भूशाह चौदह वर्ष की कन्या कुवारी को ब्याहने चला। गाव मे शादी-ब्याह का मजा है। ऐसे मौकों पर सभी सज-धज जाते हैं। पास-पड़ोस और दूर के लोग अपने गांव में आए भले लगते हैं। हमेशा अंधेरी रहने वाली रात, गैस के उजाले से जगमग कर उठती है। गांव के इन अंधेरे कोनों तक जब रोशनी पहुचती है, तो रात-भर नींद नहीं आती। सोने को मन नहीं करता। रात मे देर-देर तक नाच-रंग चलते हैं। बेटी का घर हो, तो ब्याह की तैयारी दो महीने पहले ही आरंभ हो रहती। मुहूर्त मिल जाने के बाद का हर दिन, ब्याह का दिन लगता है। बच्चों की बात ही क्या···। हसी-खुशी के साथ उस दिन का इंतजार सबको रहता है।

चालीस वर्ष का शम्भूलाल···। आदमी कितना ही बन-ठनकर निकले, उम्र का पता लगाने वाले मालूम कर ही लेते है। शम्भू को लौंडा बनाने की हर तजबीज सामने आने लगी। जरा धूमधाम से बारात निकले। दूर के लोगों को मालूम हो कि इस गांव से कभी बारात निकली थी। लोगों को लगे कि शम्भूशाह की बारात है।

सज-धज कर शम्भूशाह की बारात खड़ी है। दूल्हे की पोशाक में शम्भू जच गया है। अचकन तो बहुत ही आला किस्म है, पर पाजामा···? इटैलीन की काली अचकन के साथ लट्ठे का सफेद पाजामा होता, तो सोने मे सुगंध पैदा हो जाती। तभी यकायक किसी को सूबदारजी का ख्याल आया। वही ऐसा पाजामा पहनता है। सूबदारजी से पाजामा माग लाया गया। चिट्-सफेद पाजामा पहनकर दूल्हा सभी को जच गया। शम्भू इतना पैसेवाला आदमी है, पर ऐसा सफेद पाजामा पहली बार पहनने मे आया है।

सूबदारजी ने अपनी हरी जीन कलफदार पतलून के ऊपर लट्ठे की उजली कमीज पहन ली। बारातियो के बीच उनकी शान निराली थी। सफेद कमीज के कारण लोगों की पहली नजर या तो उसी की कमीज पर होती, या फिर दूल्हे के पाजामे पर जा ठहरती। कपड़ा भी इतना सफेद हो सकता है, यह बात उनके सामने पहली बार आई थी।

शम्भूशाह की बारात है। गाजे-बाजे वाले, नाच-रंग वाले, निशान-झंडे वाले—बच्चे-बूढ़े सभी बारात मे शामिल है। दूसरे गांव के पास से बारात जब गुजरने लगी, तो देखने के लिए लोग नीचे उतर आए। बारातियों मे सूबदारजी का अपना रंग अलग है। खूब घनी-काली मूछो के बीच से छन-छनकर निकलता हुआ बैंट सिगरेट का धुआ···। सूबदार को ही बारातियो मे कुछ जानकर लोग उसी से पूछते हैं—

"किस गाव की बारात है? दूल्हे का नाम···और किस गांव को जाएगी बारात?"

पूछने वालो की उत्सुकता पर सूबदार शम्भूशाह का परिचय देता है और अंत मे पाजामे का जिक्र भी छेड़ देता है।

पाजामा था, जिस पर सबकी आंखें लगती थी। इतना चिट्-सफेद···। दूध भी क्या चीज है इसके सामने। यही पर पाजामे की बात खुल गई कि पाजामा शम्भूशाह का नही है। बारातियों को यह बात बिलकुल अच्छी न लगी। सूबदार को इशारा किया गया कि वह ऐसी बात न करे। इसमें सरासर दूल्हे की बेइज्जती है। सारा का सारा गांव जानता है।

लोगों के समझाने पर सूबदारजी चुप हो रहे। मूंछों से बैंट का धुआं उड़ाते रहे।

बारात आगे चली। शम्भूशाह की बारात है। ढोल-दमाऊं, नरसिंघ, शिणैइ आदि—गाजे-बाजों की गमक के साथ…। अगला गांव भी दूर नहीं। पास से गुजरते हुए फिर किसी ने दूल्हे के बारे में पूछ लिया। फिर वही परिचय—"शम्भूशाह पैसे वाला आदमी है, पर जो पाजामा उसने पहना है, वह भी" उसी का है।"

इस बार बारातियों ने तकरार उठा दी। सूबदार से बोले कि वह पाजामे का जिक्र ही न करे। जान-बूझकर सबकी बेइज्जती कर रहा है। आखिर वह पाजामा ही तो है, कोई ढाके की मलमल तो नहीं है।

सुनकर सूबदार चुप रह गया। तीसरी बार फिर किसी ने पूछा, तो सूबदार ने आगे बढ़कर वही परिचय दिया। बोला—"पाजामे का यहां कोई जिक्र नहीं।"

लोगों ने पूछा—"किस पाजामे की बात कह रहे हो, वह जो दूल्हे ने पहना है ?"

"हां, वही। जो उसने पहन रखा है, वह पाजामा भी उसी का है।"

अब की बार बारातियों ने दूल्हे का पाजामा उतरवा कर उसे सूबदार के आगे फेंक दिया—ले ज्जा…! तब अपना वही पाजामा शम्भूशाह को पहनना पड़ा।

अगले दिन बारात लौटी। गांव की औरतें दुल्हन को देखने आईं। दुल्हन को सबने पसंद किया। सुंदर गोल चेहरा, गुलाब जैसे होंठ, सुग्गे जैसी नाक और आंखें तो जुगनू-सी दिपने वाली सुंदर…। ताजी फूटी हुई अनार की कली जैसी दुल्हन…। फिर शम्भूशाह की याद आती है। तब जिसने भी दुल्हन को देखा, उसी ने शम्भूशाह को फटकारना चाहा। लड़की की उम्र से भी छोटी दुल्हन उठाकर लाया है।

इन दिनों शम्भूशाह ने गांव की खूब खातिरदारी की। लगातार तीन दिन तक सुबह-शाम भोज चलता रहा। ऐसा खाना कि लोग सब कुछ भूल गए। खाना ही सबको याद रहा। दुल्हन के बेजोड़ पड़ जाने की चर्चा वहीं दब गई। अब सूबदारजी का सफेद पाजामा ही चर्चा का विषय बना। धीरे-धीरे नई दुल्हन के कानों तक पाजामे की बात पहुंची और शम्भू अपनी सुहागरात भी शायद ठीक से न बिता पाया था कि सूबदारजी नई दुल्हन को लेकर चम्पत हो गए।

हजारों की रकम लगा दी है शम्भूशाह ने। बारात के खर्च से चौगुनी रकम उसकी खोज में लग चुकी है। पौड़ी में जाकर फौजी अफसरों से मिल चुका। लेकिन सुबदारजी का कोई सुराग नहीं लगता। अब जाकर मालूम हुआ कि वह फौज में नहीं था।

दुल्हन को भगा ले जाने की बात को लोगों ने अपनी-अपनी समझ के मुताबिक लिया। इसमें किसी का दोष नहीं, जिसका जोड़ था, उसके साथ जुड़ गया है। लोग कहते हैं कि आदमी का पाप उसे जल्दी खा जाता है। शम्भूशाह पापी तो नहीं था। आज उसे मरे हुए दो वर्ष हो चुके हैं। निःसंतान मरे राजाजी-वाली बात लोग कहते हैं। अंत में यही बात उसके साथ हुई।

अब तो, सुबदारजी भी घर लौट आया है। लंबे समय से वह घर पर ही रहने लगा है। एकदम घरेलू आदमी की तरह। चाची खाना बना देती है और वह चुपचाप काम में लगा रहता है। कहने वाले आज भी उसके बारे में कई कुछ कहते हैं, पर वह तो किसी की सुनता ही नहीं। उसे किसी की परवाह नहीं। गांव के लोगों को आश्चर्य होता है। आदमी क्या इतनी जल्दी बदल सकता है? चीना के दिमाग में जरूर कोई कमी आ गई है। हंसी-दिल्लगी में लोग कभी पूछ लेते हैं—"सुबदारजी! तुम तो फौजी कायदे-कानून के आदमी थे, फौजी आदमी एकदम इतना घायल नहीं हो जाता। लेकिन तुम्हारी तो मूंछें भी झुक गई हैं।"

लोग कुछ भी कहते रहें, सुबदारजी का उत्तर मौन में मिलता है। सुबदारनी की याद दिलाते ही उसकी आंखों से टप्-टप् आंसू निकल आते हैं। सुबदारनी के बारे में वह किसी को कुछ नहीं बताता कि उसका क्या हुआ। लोग पूछते हैं तो सुबदार वहां से उठकर चल देता है। कुछ कहते नहीं बनता।

बेचारे की आत्मा दुःखी है। उस बेचारी का जाने क्या हुआ। वह नहीं रही, साथ ही चीना को भी बदल गई है। धीरे-धीरे लोगों को मालूम हो गया। पता चला कि चीना फौज में नहीं था। वह चीन की साम्यवादी पार्टी का वर्कर रहा है। सन् उन्नीस सौ बासठ में जब हिंदुस्तान के चीनी खेमे में भगदड़ मची और उनके दफ्तर बंद हुए, तो सभी वर्करों ने इधर-उधर भागकर अपनी जानें बचाईं। भागते नहीं, तो मौत के घाट उतार दिए जाते, या जेलों के अंदर बंद पड़े सड़ते होते।

उसी हड़बड़-दबड़ में चीना को भागने का मौका मिला और वह भागकर गांव

चला आया। इसके बाद गांव वालों ने उससे कहा कि—चुन्नीलाल! अब तो अपना नाम बदल दे। वरना चीनी समझकर कोई तुझे यहा से भी खदेड़ देगा।

चीना किसी की बात नही सुनता। आखिर अपनी जगह अपनी ही है। अपना पहाड़···अपना गाव···और अपनी जान-पहचान के सब लोग। अब चीना का कोई कुछ नही बिगाड़ सकता।

समय बीतता गया। धीरे-धीरे चीना ने अपनी बात लोगों से कहनी चाही। उसकी बातों से लगता है कि अब वह पूरी तरह बदल गया है। पर उसके विचार मे वर्ण-व्यवस्था, जाति-धर्म, भक्ति-मुक्ति आदि नाम की कोई चीज अब भी नही। किसी ने बताया कि चीनी खेमे के लोगो पर इन बातों का कोई असर नही होता। उनके दिमाग में सबको बराबर करने की एक बात रहती ही है। सबके अधिकार एक बराबर रहे, तो यह भी कोई बुरी बात नही।

साम्यवादी खेमे का हर आदमी लीडर है। अपनी ड्यूटी के ये लोग पाबंद रहते है। काम करने की क्षमता भी कम नही होती। चीना के स्वभाव मे ये बातें आज भी मौजूद है। लेकिन स्थान की अपनी विशेषता सबको बांधती है। जैसा देश, वैसा वेष···। पहाड़ आकर चीना के विचारों मे और भी बदलाव आ गया था। यह आश्रमों और मठ-मंदिरो का देश है। धर्म-कर्म, पूजा और दान-दक्षिणा का देश है। इस वातावरण में पलने वाले रीति-रिवाजो को चीना चुपचाप देखता रहता। कभी-कभी उसके लिए यह सब कुछ जैसे असह्य हो जाता। देखकर वह भड़क उठता। उसे यह सब कुछ पसंद नही। पर किसी की नापसंदगी के कारण किसी चीज का मूल्य घट तो नही जाता!

किन्नर नगरी मे त्रिनेत्र आश्रम की अपनी महिमा है। महंतजी की इच्छा के विरुद्ध कोई उनसे मिल नही सकता। उनके दर्शन-लाभ नही कर सकता। नागा बाबा इसी बात पर असंतुष्ट थे कि उन्हें महंतजी से नही मिलने दिया गया। [illegible]

सेवादारों ने आकर उन्हें पकड़ लिया। तब तो सब दुर्गत बदी। जोगियों मे मार-

पीट भी चलती है, पर पिटना कोई सजा नहीं। इस अपराध की सजा है—अड़ंगी। वही सजा नागा बाबा को दी गई। घुटनों के बाहर दोनों हाथ रस्सी से बांध दिए और पिंडलियों के बीचों-बीच एक मोटा लक्कड़ फंसाकर उन्हें दीवार से अड़ा दिया गया। इसी का नाम अड़ंगी है। इस सजा की कम-से-कम अवधि चौबीस घंटे की है। नागा बाबा को चौबीस घंटे की अड़ंगी लगा दी गई। चौबीस घंटे तक वे दीवार से अड़े बैठे रहे। इस सजा की मुद्रा भी कैसी है। लगता है, आदमी आराम से बैठकर किसी की अविकल प्रतीक्षा कर रहा है।

सजा की अवधि समाप्त होने के बाद महंतजी को खबर पहुंचाई गई। आदेश मिला कि नागा बाबा को आश्रम की सीमा से बाहर कर दिया जाए, और फिर कभी इस सीमा में कदम न रखने दिया जाए।

आदेश के मिलते ही सेवादारों ने बाबा की कलाइयों से रस्सी खोल दी और दो आदमी पकड़कर उन्हें आश्रम की सीमा से बाहर छोड़ आए। आश्रम की सीमा के बाहर, सड़क के एक किनारे कुछ देर बाबा चुपचाप खड़े रहे। सेवादारों ने उनका दंड-कमंडल हाथ में देने के बजाय उनके आगे धर दिया और चरण छूकर वापस लौट आए। लौटते हुए सेवादारों को बाबा देखते रहे। इसके बाद त्रिनेत्र आश्रम की अट्टालिका पर बाबा की आंखें अंगारे बरसाने लगी। इस अट्टालिका में उनका गुरुभाई रहता है। गुरुभाई के होते हुए ऐसी सजा मिल जाए। नागा बाबा सोचने लगे—हां, कभी वह गुरुभाई ही था। उसका स्नेह…। धीरे-धीरे आंखों में धधकते हुए अंगार बुझने लगे। शरीर और ब्रह्मांड में तेज बुखार की तरह चढ़े हुए क्रोध का ताप उतरने लगा। एक क्षण के लिए महंतजी का निर्मल और शीतल कर देने वाला स्नेह, दूध की तरह उफन आया। काठिया-बाड़-गुजरात की वह धर्म-परायण भूमि आंखों के सामने उतर आई, जहां निरंतर कई वर्षों तक अनेक आश्रमों में नागा बाबा अपने इस गुरुभाई के साथ रहे। वह भी क्या समय था, कैसा अद्भुत स्नेह…!

चीना का कहना है कि साधु-संतों को माया-मोह से मुक्त होना चाहिए। उन्हें संसार की हर वस्तु से विरक्त रहना चाहिए। इन्हीं सब बातों से अलग रहने के लिए जोग-रूप धारण किया जाता है। घर-गृहस्थ का त्याग करना होता है। पर नहीं, नागा बाबा को लगता है कि सब कुछ त्याग देने से आदमी के पास क्या शेष बचता है। साधु-संत भी आखिर आदमी ही होते हैं। यह महंत भी

पहले आदमी था। तब उसके हृदय में भी वही सब था जो आदमी के पास होता है। लेकिन आज उसके पास पहले से ज्यादा कुछ है। लोग कहते हैं, वह आदमी से देवता बन गया है। नर से नारायण बना है। इसलिए अब उसे किसी भाई-चारे की जरूरत नहीं है, किसी का स्नेह पाने की इच्छा मन में नहीं है। सोचते हुए नागा बाबा की आखें गीली हो आती हैं। फिर ख्याल आता है, इसमें गुरुभाई का भी क्या दोष है। आज वह भी एक कैदी की तरह रह रहा है। सेवादारों को सब कुछ सौंपकर स्वयं को एक किनारे रखे हुए है। महात्मा को एकांत चाहिए। वह एकांत उसने अपने लिए इस तरह से जुटा लिया, तो इसमें बुरा क्या है। सोचकर नागा बाबा ने अपना दंड-कमंडल उठा लिया और वहीं सड़क के किनारे एक ऊंचे पत्थर पर जा बैठा।

चौबीस घंटे तक अड़ंगी लगने के कारण पिंडलियों में थोड़ा दर्द उठने लगा था। पहली बार नागा बाबा को ऐसी सजा मिली थी। लेकिन बाबा ने इसे सजा के रूप में नहीं लिया। उस समय लगा कि यह संसार एक बड़ा जेलखाना है। इसमें जन्म धारण करने वाला प्राणी अपने आप मुजरिम ठहरता है और अपने पैदा होने की सजा पा रहा है। तन को सजा देने से आदमी का मन तो नहीं बदल जाता। मन को बदलने वाली सबसे बड़ी सजा तो क्षमा ही हो सकती है। क्षमा-दान से मन बदलता है।

नागा बाबा ने शारीरिक कष्ट सहे हैं। गर्मियों में पंचानल साधा है, शीतकाल में गंगा की लहरों को तन पर झेला है। तब चौबीस घंटे की अड़ंगी उनका क्या बिगाड़ सकती है। हां, थोड़ा-बहुत कष्ट इसलिए हो जाता है कि लंबे समय तक चिलम-पानी नहीं मिलता। चिलम का न मिलना अपने आप में बड़ी सजा है। नागा बाबा ने धीरे-से अपना कमंडल उठाया। उसमें रखी चिलम निकाल ली। फिर बगल के नीचे लटकती झोली से पत्तियां निकालकर उन्हें हथेलियों के बीच मसलने लगा।

जोगी का हठ—कहते हैं कि जब जोगी अपनी जिद पर आता है तो उसे पूरी करके ही छोड़ता है। नागा बाबा ने मन में सोच लिया है कि जाऊंगा तो इस गुरुभाई के दर्शन करके ही जाऊंगा। दर्शन किए बिना अब बाबा कहीं नहीं जाएगा।

इस घटना को अब बारह वर्ष पूरे होने जा रहे हैं। बारह वर्ष में एक कुंभ

पूरा हो जाता है। लेकिन नागा बाबा के लिए तो वही पर्व का दिन है, जिस दिन इस गुरुभाई के दर्शन होंगे। नागा बाबा की इस बात में अब कोई वजन नहीं रह गया है। गुरुभाई के दर्शन भी अब उतने महत्त्वपूर्ण नहीं रहे।

जब तब चीना यही कहता है कि इन बाबा लोगों की बात का कोई भरोसा नहीं। पर भरोसा क्यों नहीं? नागा बाबा पर भरोसा रखकर ही गांव के लोगों ने उन्हें पंचायती खेत दिए हैं। उनके लिए वहीं गंगातट पर आश्रम बना दिया है। सुबह-शाम नागा बाबा की नागफणी बजती है, तो लोगों को एहसास होता है कि उनकी सुध लेने वाला कोई है? जो आने वाली विघ्न-बाधाओं को अपनी नागफणी की तीखी मार से भगा देता है। अब वह पुरानी हठ वाली बात नहीं है। लोग कहते हैं कि जोगी में विरक्ति का भाव होना चाहिए। पर कैसी विरक्ति? नागा बाबा ने इन गांव के लोगों को परिवार की तरह मान लिया है। एक ही बात सबसे कहते हैं—बच्चा लोगो! विरक्ति की बात अपनी समझ में नहीं आती। हम विरक्ति वाले साधू नहीं हैं। जो भाव प्रेम-मुहब्बत में है वह विरक्ति में कहां मिलता है! प्रेम करो बच्चा! प्रेम से रहो! ···सब प्रेम की महिमा है।

बाबा के मन में प्रेम है। मन सुख की तलाश में भटकता है। "सुख कहां है महाराज! इस संसार में सुख कहां देखने को मिलता है?"

सुख-दुःख की बात जब कोई भक्त-जन बाबा के सामने रखता है, तो बाबा बड़े प्यार से उसे समझाते हैं, "अरे बेटा, आदमी अपने अंदर से तो सब कुछ पाता है। यह सच है कि कभी-कभी अपने अंदर भी कुछ नहीं मिलता। अपना सुख भी फीका लगने लगता है। इसलिए माया-मोह बनाया है, दुनिया बनाई है, कि जो चीज तुम्हारे अंदर नहीं, वह दूसरे से लो। सुख-दुःख तुम्हारा अपना नहीं, वह भी दूसरों से तुम्हें मिलता है। इसलिए दूसरों को सुखी देखने की इच्छा करो। उन्हें सुखी बनाओगे, तो उनसे ज्यादा सुख तुम पा जाओगे।"

पते की बात कहता है यह महात्मा। यह जोगी विरक्त नहीं है। बाबा का कहना है कि विरक्ति से बड़ी चीज सेवाभाव है, इसलिए किसी चीज से विरक्त नहीं होना। उन चीजों को प्राप्त कर यथायोग्य दूसरों की सेवा करना ही महात्मा का धर्म बनता है। शायद इसीलिए बाबा की भाग-दौड़ दिन-भर बनी रहती है। कभी किसी के छज्जे में, चौक या चूल्हे के पास बैठा हुआ यह बाबा बातों में मस्त दिखाई दे जाता है। घरों में जाकर सुख-दुःख की बातें सुनता है। अपने घर की

बातें बाबा को सुनाकर लोग मन को हलका कर लेते हैं। जैसे कि दूसरे का दुःख वह चुपके से अपने अंदर खींच लेता है। दिन हो या रात—किसी भी वक्त, घबराए हुए चेहरे बाबा की कुटिया में आ पहुंचते हैं।

"जल्दी चलो महाराज! भूत का झपट्टा पड़ गया है।"

इन भूत-प्रेतों के करतब बाबा अच्छी तरह समझते हैं। भूत की बात सुनते ही चिढ़ सवार होती है, "भूत का झपट्टा नहीं है बच्चा! यह तो तुम्हारी अक्ल का झपट्टा है। तुम्हारी अक्ल भूत बनकर तुमसे कुछ वसूलने आई है। कई बार समझा चुका हूं कि भूत-प्रेत कुछ नहीं होता। यह तो मन का अज्ञान है। अज्ञान और भय ही भूत-प्रेत बन आते हैं और तुम्हारी बहू-बेटियों को जकड़ा देते हैं। इन भूत-प्रेतों को तुमने देवता बनाकर अपने घरों में बसा लिया है। अब ये तुमसे कुछ न कुछ वसूलेंगे ही…।

लोगों को धीरज बंधाने के लिए नागा बाबा इस तरह की बातें कह तो देते हैं, पर मन-ही-मन इस बात को स्वीकार करते हैं कि कोई बात जरूर है, कोई ऐसी हवा इन घाटियों में चलती है, जिसके लगते ही आदमी बेकाबू हो रहता है और तरह-तरह की हरकतें करने के लिए विवश हो जाता है। पहाड़ों की इन तंग और फैली हुई घाटियों के बीच यह हवा किसी भी वक्त आदमी को जकड़ सकती है। तब से बाबा ने इन चीजों पर नजर रखनी शुरू कर दी। भूत-प्रेत, छाया, छल-छिद्र—हर तरह की विघ्न-बाधाओं की परख का विचार मन में रखकर उन्हें अपने पास से देखा। भूत आत्माओं को बुलाकर उनसे बातचीत करते हुए बाबा कई बार देखे गए। भैरों, नागराजा, नरसिंह आदि देवताओं की पूजा अपने हाथ दे-दिलाकर उनके क्रोध को शांत किया। कुछ समय के बाद बाबा को लगा कि देवी-देवता कोई चीज नहीं है, मात्र लोगों की कमजोरी है, मन की दुर्बलता है। और इससे भी ज्यादा अगर कुछ है तो पुराने विश्वास और पुरानी परंपराओं की मार है। इन देवी-देवता और भूत-प्रेतों ने इस प्रदेश को आतंकित कर दिया है। आदमी हर वक्त डरा-डरा रहता है। जाने कब कौन देवता सिर उठा ले और अपनी मांग ले बैठे! मांग पूरी हो जाने पर ये देवता चुप हो जाते हैं। जैसे वेतन-भत्ता बढ़ जाने के बाद सरकारी कर्मचारी हड़ताल तोड़ देता है। लगता है, सरकारी कर्मचारी और भूत-प्रेत में ज्यादा अंतर नहीं।

दुनिया की खबर नागा बाबा रखते हैं। उन्हें इस बात पर आश्चर्य है कि

दुनिया का आदमी कहां से कहां पहुंच गया है। रूस वाले चंद्रलोक पर राहू की तरह मंडरा रहे है, अमरीका वालों ने वैकुंठ यात्रा शुरू कर दी है। एक अपना देश है कि सूरज सिर पर चढ़ आया, फिर भी आंखें नहीं खुल रहीं।

कभी नागा बाबा को चीना की बातें याद आती हैं। वह आदमी चाहे कैसा है, पाखंडी बिलकुल नही। वह सारी बातें समझता है। लेकिन हजारों में एक अकेला आदमी क्या कर सकता है पिछले दिनों इसी बात पर वह पांडे गुरु से बहस पड़ा था। भूत-प्रेत और देवी-देवताओं से बात शुरू हुई और अध्यात्म-चिंतन पर आकर रुक गई। बात करना भी नशा करने के बराबर होता है। जिन लोगों को यह आदत है, वे किसी कीमत पर उसका मजा नहीं जाने देते। अपनी बात दूसरों से मनवा कर ही शांति मिलती है। पांडे गुरु को बातो का नशा मार जाता है। बात-बात में दुश्मनी पैदा हो जाती है और तभी तो सही बात भी सामने आ जाती है। उस दिन अपने वेदशास्त्रों की चर्चा उठाते हुए पांडे गुरु बोले कि दुनिया को अध्यात्म-दर्शन कराने वाला गुरु यही भारत देश है। इस देश ने दूसरे देशों को सभ्यता दी, उन्हें अपना ज्ञान-विज्ञान दिया। हमारे दिए हुए ज्ञान-विज्ञान द्वारा ही इन देशों ने धरती-आकाश को छान मारा है। वरना इनके पास क्या था ?

उस दिन पांडे गुरु की बातों को चीना चुपचाप सुनता रहा। पर जब पांडे-जी ने ज्यादा ही शेखी बघारना शुरू किया, तो चीना से न रहा गया। बोला, "अब रहने दीजिए पांडेजी! आपने दूसरों को सब कुछ तो दे ही दिया है, फिर अपने लिए क्या रखा है।"

"क्या मतलब ?" पांडेजी तेजी मे आ गए।

"मतलब यही कि आपके पास यदि कुछ होता, तो उसका प्रभाव किसी-न-किसी रूप में आज हमारे जीवन पर पड़ा होता। लेकिन यहा तो कुछ भी दिखने में नही आता। माना कि यह देश धर्म-प्रधान है। अध्यात्मवादी है, पर उस अध्यात्म के लिए हमने भौतिक की हत्या क्या नही कर दी है ? आप लोग मानते है कि हमारे ऋषि-मुनियो को भौतिक जीवन में दिलचस्पी नही थी, पर अपनी उस अध्यात्म-साधना के द्वारा उन्होने ऐसी कौन-सी मंजिल हमे दिखा दी है कि जहा पहुंच कर हमें अपने होने का पूरा एहसास हो। हमें लगे कि हा हम हैं। लेकिन नही, उस दिशा मे भी आज हम भटके हुए हैं। कोई एक विश्राम हमें नहीं दीख रहा।"

इतना कहकर चीना चुप हो गया। पर पांडेजी चुप रहने वाले नहीं हैं। उन्हें अध्यात्म की लगन लगी है। बात-बात में उनका अध्यात्म आगे आता है। देखकर चीना को और आगे बढ़ना पड़ा। बोला, "पांडेजी ! मुझे तो लगता है कि आपने उस अध्यात्म के चक्कर में इस दुनिया को भी खो दिया है। उस अध्यात्म का ही कमाल है कि आज हम अपने लिए भोजन-वस्त्र तक नहीं जुटा पाए हैं। भोजन-वस्त्र के लिए उन लोगों से याचना करते हैं, जिन्हें हमारे पूर्वजों ने म्लेच्छ कह दिया था। सात समुद्रों को पार करना हमारी मर्यादा में कहां था ? जब कोई सात समुद्रों की यात्रा करके इस देश वापस लौटता, तो चान्द्रायण कर्म के बाद ही उसके हाथ का पानी गले उतरता था। आज उन्हीं समुद्री मार्गों से हमारे लिए खाना आ रहा है। इन आगे बढ़े हुए देशों से हमें क्या नहीं मिल रहा है। हमें खाना दे रहे हैं, कपड़ा दे रहे हैं, दवाइयां भेज रहे हैं। बच्चों की पढ़ाई-लिखाई के लिए सब कुछ मिल रहा है। तिस पर भी यदि कर्जे की जरूरत पड़ती है, तो इन्हीं लोगों के आगे हाथ फैलाना पड़ता है। इस लेन-देन के अलावा बात-बात में दूसरे देशों के उदाहरण देकर हमें समझाया जाता है। हम विदेशी भाषा और संस्कृति के गुलाम हैं। पर चूंकि आप मानते हैं, यह देश सबका गुरु है। इस-लिए शायद गुरु-दक्षिणा के रूप में ही यह सब चला आ रहा है। ठीक है न ?"

चीना की बातों से उस दिन पांडेजी के भीतर एक चोट पड़ी। पांडेजी ने चुपचाप इस चोट को सह लिया। वे किसी को महसूस नहीं होने देते कि दूसरे की बातों से उनके भीतर कैसी हलचल पैदा हुई है। कितना बड़ा घाव पहुंचा है। उस दिन चीना की बात को तुरंत मेट देने के ख्याल से पांडेजी ने तत्काल विषय को बदल दिया। पांडेजी हार मानने वाले नहीं हैं। लेकिन लंबी चलती हुई बहस में यकायक विषय परिवर्तन का क्या अर्थ है, इस बात को सब लोग नहीं समझते। अपनी बात पर चीना के वजनदार शब्दों की मार से पांडेजी मन-ही-मन तिल-मिला उठे। चार आदमियों के बीच चीना कुछ और न कह बैठे, सोचकर वे एकी-करण की बात पर आ गए।

गांव में रहने के बाद चीना गांव के बारे में बड़ी तेजी के साथ सोचने लगा था। गांव की कमजोरियों को अपनी आंखों से देख चुकने के बाद उसने कुछ लोगों

से बातचीत की। एकता और आपसी सहयोग से ही गांव में कुछ हो सकता है। लोगों ने उसकी बात को समझा और एक कमेटी बन गई। जिसका नाम 'एकता कमेटी' रखा गया। इस कमेटी द्वारा आज भी एकता पर बल दिया जाता है, ताकि सब लोग एकजुट होकर काम कर सकें।

चीना और उसकी एकता कमेटी द्वारा रखे गए एकीकरण प्रस्ताव के पक्ष में पांडेजी कभी नहीं रहे। इस वक्त चीना को सही रास्ते पर लाने के ख्याल से उन्हें एकीकरण की बात पर आना पड़ा।

एकीकरण की बात पर चीना ने निराशा जाहिर की। विभिन्न जाति, धर्म और विचारधारा के लोगों में एकता कैसे लाई जा सकती है। जिस देश में जात-पांत, धर्म-कर्म और मान-मर्यादा की दीवारें तन कर खड़ी हों, वहां एकता की बात उठाना ही व्यर्थ है।

एकीकरण के प्रति चीना के निराश वाक्यों को जब पांडेजी सुनते हैं, तो मन-ही-मन मुसकराते हैं। स्साला···बड़ा आया एकीकरण वाला···।

चीना जानता है कि पांडेजी एकीकरण के पक्ष में नहीं है। गांव में कुछ लोग ऐसा नहीं चाहते। क्यों नहीं चाहते, यही बात समझ में नहीं आती। शुरू में जब एकता कमेटी की स्थापना हुई तब पांडेजी भी इस कमेटी के सदस्य बने थे। कमेटी की कार्यकारिणी में दस आदमी रखे गए। साधारण सदस्यों की संख्या पच्चीस तक पहुंच गई थी। इन सब लोगों ने मिलकर कमेटी का विधान बनाया। विधान के नियमों, उप-नियमों में एकता और संगठन की बात पर जोर दिया गया।

धीरे-धीरे कमेटी का काम जोर पकड़ने लगा। लोगों की समझ में बात आने लगी कि एकता और संगठन के द्वारा ही गांव और पिछड़े प्रदेश को उन्नत बनाया जा सकता है। इसलिए आस-पास पड़ने वाले सभी गांवों को इस संगठन में लाना होगा। गांव के आपसी छोटे-मोटे झगड़े और मन-मुटाव के कारण एक तनाव-सा हर वक्त मन में बना रहता है। एकता कमेटी इन झगड़ों पर उचित निर्णय लेगी। इसके अलावा गांव में सफाई का काम, स्कूल, लाइब्रेरियां खुलवाना, सड़कें बनवाना, शराब की भट्टियों को बंद करवाना, त्योहार, मेले, उत्सव आदि मनोरंजन कार्यों को सामूहिक रूप से संपन्न करवाना, कमेटी के विधान में सर्व सम्मति से स्वीकृत करा लिया गया। लोगों में उत्साह भर आया। एकता कमेटी द्वारा

पहला वार्षिक-उत्सव भी धूमधाम से मनाया गया। सामुदायिक विकास के अधिकारी लोगों ने उत्सव में भाग लिया। उत्सव में एक वरिष्ठ अधिकारी आए। अपने भाषण में उन्होंने इस कमेटी की प्रशंसा करते हुए कहा कि भारतीय गावों का विकास ऐसी ही कमेटियों द्वारा हो सकता है। पंचायत-राज का मकसद यही है कि गांव के लोग अपनी उन्नति का सही रास्ता अपना सकें। अधिकारी ने सामुदायिक विकास का अर्थ लोगों को समझाया। गांव के बच्चे-बूढ़े सभी ने तन्मय होकर उनके भाषण सुने। सबको इस बात का विश्वास हो गया कि एक दिन यह कमेटी गांव के लोगों में नई जिंदगी भर देगी।

अधिकारी लोगों ने आश्वासन दिया कि गांव के लिए विकास कार्यों में सरकार हर तरह से सहयोग देती है। इस कमेटी को जब भी सहायता की जरूरत पड़े, हमसे सम्पर्क करना होगा।

आश्वासन मिलने की देर थी कि कार्यकर्त्ताओं में जोश भर आया। लोगों में एकता की भावना जगने लगी। सामुदायिक ढग से विकास की शुरूआत होने लगी। लेकिन प्रश्न उठता है कि विकास कौन करे? जिस धरती का बेटा पेट से निकलते ही शहर की ओर भागता है, उस धरती का कल्याण कैसे होगा? विकास का क्रम तो आदमी के साथ जुड़ा हुआ है। इन गांवों में आदमी कहां है। इतना बड़ा गांव है लेकिन आदमी कोई नहीं। केवल स्त्रियां हैं, या फिर बच्चे-बूढ़े ही सर्वत्र दिखाई देते हैं। इनके द्वारा कैसे विकास संभव है। इस बात को देखते हुए एकता कमेटी में प्रस्ताव पास किया गया कि गांव के युवकों को जहां तक संभव हो, गांव में ही रोक रखना चाहिए। फिलहाल कुछ इस तरह से सोचा जाए कि उसकी रोटी-रोजी की समस्या गाव या उसके आस-पास ही हल हो सके। कमेटी ने यह भी नियम बना लिया है कि शहर से गांव लौटने वाले आदमी को गाव वालो की तरफ से कुछ सुविधाएं मिलनी चाहिएं। गाव की दिक्कतों को देखते हुए लंबे समय तक शहर में रहने वाला आदमी अंत में वहीं बसने की कोशिश करता है। गांव वालों द्वारा यदि ऐसे लोगों को सहायता पहुंचाई जाती है, तो वह खुशी से वापस आकर गाव में रहने लगेंगे। सहयोग न मिलने का नतीजा है कि आज गाव के गांव खाली हो चुके है। दरवाजों पर ताले पड़ गए है और थोड़ी-बहुत जो उपजाऊ जमीन है वह भी बंजरभूमि में बदलती जा रही है।

विकास की लहर है। सामुदायिक विकास की बातों को दयालजी साहब

अच्छी तरह समझते हैं। इस महकमे में एक अधिकारी के पद पर उन्होंने काम किया है। नौकरी से अलग हो जाने के बाद दयालजी साहब को बहुत-सी बातों का ज्ञान हुआ। उन्होंने लोगों को बताया कि काम काम मे फर्क होता है। कागजी कार्यवाहियों से किसी का कल्याण नहीं हुआ। अब जाकर उनके अनुभव में बात आई कि अपनी कीमत पर, आदमी को जीने के लिए कड़ी मेहनत की जरूरत है।

नौकरी के बाद दयालजी साहब का गांव लौट आना एक बड़ी बात थी। दयालजी साहब जाते भी कहां? जहाज का पंछी घूम-फिरकर वही आता है। वह अन्यत्र कहां जाएगा।

जवानी का न सही, बुढ़ापे का अनुभव भी अगर दूसरों को मिल जाए, तो बड़ी बात है। इस अवस्था में सेवा-भाव मन में रखना चाहिए। वक्त ने दयालजी साहब को वैसा ही कुछ बना दिया है। उनके अंदर यही सब देखते हुए इस बार दयालजी साहब को ही लोगों ने एकता कमेटी का अध्यक्ष चुन लिया है।

दयालजी साहब की निगरानी मे एकता कमेटी के कार्यक्रम चलने लगे हैं। उन्हे गांव की प्रगति मे कम दिलचस्पी नही। गांव का भविष्य उज्ज्वल दिखाई देने लगा है। अतीत को न भूलने वाला आदमी ही भविष्य-द्रष्टा हो सकता है। दयालजी साहब अपने अतीत को भी प्रायः देख लेते हैं। उन्हें याद आता है—गांव लौटे हुए अभी ज्यादा समय नहीं हुआ था कि दिन-दिन भारी पड़ने लगा। दयालजी साहब इस भारीपन को झेलने के आदी हैं, पर बिरजा बहू का का क्या हो! वह तो गांव मे कदम रखते ही खासी तंगी महसूस करने लगी थी। दिन-भर सुस्त बैठे रहना और अपनी कलाइयों को देखना, उसका काम था। बिरजा बहू की उजली गोल-गोल कलाइयां, मांसल-मोटी खूबसूरत कलाइयां···। इसी तरह बिरजा बहू एकांत मे, रेशमी कपड़ों से लिपटी हुई अपनी स्वस्थ काया को उघाड़कर भी देखती होगी। जब वह शहर में थी, तो हर वक्त शीशा उसके सामने रहता। शीशे में कभी अपनी खूबसूरत आंखों को, कंधों की मांसलता और कभी सारे बदन को वह देखती। आज भी बिरजा को जाने कितना कुछ याद आता है और तब वह अपने-आप मे मगन बैठी रहती है।

गांव में आकर दयालजी साहब को भी सुस्ती ने घेर लिया था। बिरजा कभी चाय बनाकर दे देती, तो उनकी मौनता भंग होती। चाय पीते और घर के

आगे फैले हुए सेंमल के पेड़ की तरफ देखते रहते। विशालकाय सेंमल की टहनियों पर खिले लाल फूलों को देखते रहना ही उन्हें अच्छा लगता था। सेंमल के खिले फूलों को देखकर पुराने गीत की कोई पंक्तियां उनके ख्यालों में आ जाती—

यो संसार फूल सेंवल को सुगना देत लुभायो···
मारी चोंच जब निकसी रूई, सिर धुन-धुन पछतायो।
—तूने हीरा जनम गंवायो···।

अब तक यह मन का सुग्गा जाने कहां-कहां भटकता रहा है। कैसी-कैसी कल्पनाएं करता रहा। जीवन सचमुच सेंमल के फूल की तरह लगता रहा। एक स्वप्न की तरह। जिसके टूटते ही दयालजी साहब को लगा कि अब सिर धुन-धुन पछताने की ही बात रह गई है। सारा जीवन शहरों में खप गया। तब दयालजी साहब के मन में यह बात कभी नहीं आई कि जीवन सेंमल के फूल से अलग कुछ और भी हो सकता है। उन्होंने कहां सोचा था कि दफ्तर में कलम चलाने के अलावा दूसरे काम भी आदमी को करने पड़ते हैं।

शहर की आबोहवा और रंगीनियों को देखने के लालच से गांव के लोग साल-छः महीने में एकाध मर्तबा दयाल साहब की कोठी पर उतर जाते। अच्छी-खासी कोठी दयालजी साहब को मिली थी। कोठी के आगे लंबा-चौड़ा एक खेत भी उसी में शामिल था। जहां गुलाब के पौधे नजर आते थे। कोठी के भीतर दो नल थे। बाहर खेत में भी एक नल छोड़ दिया गया था।

गांव के लोग उस गुलाब की फसल को देख खुश हो लेते। साथ ही उन्हें महसूस होता कि यह फसल किस काम की है। दयालजी साहब को गांव के लोगों ने कई बार कहा कि पानी तुम्हारे घर के आगे आया है। जमीन भी यह खासी अच्छी है। इसमें ढेरों साग-पात उगाया जा सकता है। क्यों नहीं यहां कुछ बो देते हो। लेकिन गांव वालों की बात पर दयालजी साहब मन-ही-मन मुसकरा देते।

गांव के लोग कहते—चलो, ऐसा न सही, घर का मकान तो मरम्मत करवा लो साहबजी! उसकी छत तो उतरती जा रही है। दीवारें फट रही हैं। उसकी मरम्मत न हुई, तो फिर मकान की पूरी कीमत में वह खड़ा हो पाएगा। गांव के बीच का मकान है, गांव की शोभा है। गांव के बीच कोई मकान खंडहर

की शक्ल में नजर आए, यह किसी को अच्छा नही लगता। फिर आने-जाने वाले लोग मकान की हालत देखकर जो समझते हैं, वह यही कि इस घर का मालिक…।

लेकिन दयालजी साहब को न मकान की चिंता थी, न जगह-जमीन की। नौकरी ही कुछ सब है। नौकरी से जो मिलता है, वही सब कुछ है। उसी में दो लड़को को पढाया। लड़की की भी शादी की। और अब पचपन वर्ष की उम्र में आकर वह सब कुछ छूट गया। नौकरी गई, उसके साथ कोठी भी गई। शहर छूट गया। मजबूरी आ पड़ने पर गांव की याद आई। सोचते हैं दयालजी साहब, गांव वालो के कहने मुताबिक कोठी के आगे फैले हुए खेत मे सब्जी उगाई होती। घर का मकान ही मरम्मत किया होता। जगह-जमीन किसी के हवाले कर दी होती, तो आज वह किसी-न-किसी रूप में आबाद मिल सकती थी। अब जमीन की मेढ़ पर उगे घास और मोटी जड़वाली कांटेदार झाड़ियो को देखकर हिम्मत नही रह जाती। हवा में झूलती हुई मकान की छत और दीवारों पर उगे घास को देखकर वे बातें याद आती है कि इस घर का मालिक…।

गाव वालों की सहानुभूति भी तभी तक थी जब तक वे कोठी लेकर शहर में रहते रहे। नौकरी करते रहे। इन चीजों से अलग होते ही लगा कि दुनिया ही बदल गई है। गाव वालों का रुख बदल गया है। उनके दिल-दिमाग दयालजी साहब को बदले हुए लगते हैं। इतना ही नहीं, तरह-तरह की बातें ये गांव के लोग करते हैं। चालीस वर्ष तक शहर में रहने वाला परिवार गांव लौटकर क्या कर सकेगा? हां, जेब मे पैसा हो, तो दे-दिलाकर कुछ करवा लिया जा सकता है। लेकिन दयालजी के पास पैसा भी इतना कहां है। बच्चो की पढाई और लड़की की शादी मे आधी से ज्यादा रकम तो निकल गई है। दयाल साहब समझते हैं कि गाव के लिए इतना पैसा कम नही। पैसा शहर के लिए जरूरी है। गांव पैसा नहीं मांगता। वह तो शक्ति चाहता है, तंदुरुस्ती और मेहनत मांगता है, साथ मे गुजारे लायक, ईमानदारी भी…। दयाल साहब के पास पैसा और ईमानदारी थोड़ी-बहुत मिल सकती है, पर मेहनत और तंदुरुस्ती कहा है।

गाव के लोग तो उसी का साथ देंगे जिसकी भुजाओं मे दो घोड़ो का बल हो और घर पर कोई जनाना जात ऐसी हो, जो दयालजी जैसे चार मर्दों का मुकाबला कर सके। ऐसा ही आदमी गाव का जन्मजात असली बसाकत है।

शुरू मे दयालजी साहब से गांव वाले कतराते रहे। कहीं कुछ काम के लिए

न कह बैठें। शायद इसीलिए कन्नी काट जाते।

बड़े मतलबी लोग है। आना-जाना, मेल-मुलाकात और बातचीत भी कुछ नही। बातचीत दयालजी साहब से भला क्या हो! वे करेंगे रूस-अमेरिका की बात और ये गांव वाले···। हलजोत की बात हो, कोई खेल-खलिहान की बात हो, गन्ने-गुड़ की बात हो, तो कोई बात हो सकती है। रूस-अमेरिका की बात हमारे किस काम आने वाली है। अब तो ये बातें दयाल साहब के काम की भी नही रह गई हैं। कुर्सियों पर बैठने का यह नतीजा है कि आदमी जमीन पर कदम रखते ही अपने को कही का नही पाता।

दयालजी साहब के भीतर कुछ टूटता रहता है। हवा के झोंके से सेंमल की हर शाख थरथराती है। दयाल साहब की आखें छत की ओर उठती हैं। कहीं कोई स्लेट या छत का तख्त तो हवा में नही लहरा रहा। लेकिन बरसात से पहले मकान का कुछ बिगड़ने वाला नही। सेंमल के लाल फूलों पर नजरें जा बैठती हैं।

—मारी चोंच जब निकसी रूई···। सच है, यह संसार सेंमल के फूल जैसा ही है। दिखने में खूब-सुदर···। लेकिन भीतर से खाली है। दयालजी की आत्मा सेंमल के फूलो मे भटक रही है। बिरजा बहू चाय बना लाती है, तो पी लेते है। खाने पर बुलाती है, चले जाते है। कुछ कहती है, तो चुपचाप सुन लेते हैं। उनकी चुप्पी बिरजा के लिए परेशानी का कारण बनी है। वह इसलिए भी परेशान हो सकती है कि अब उसकी नंगी कलाइयों पर दयालजी साहब की नजरें ज्यादा देर तक नही टिक पाती। नजरें मानो असमर्थता जाहिर कर रही हो। बिरजा की कोमल बाहों को देख दयाल साहब भी बेचैन रहने लगे हैं। नौकरी मे सारी उम्र निकल गई। आराम से वक्त कट गया। कष्ट क्या चीज है, इस बात को शरीर ने जरा भी अनुभव नहीं किया। लेकिन अब इस बदलते हुए वातावरण मे जिंदगी को एक कदम भी आगे बढ़ाना, दुःख-तकलीफों से खाली नहीं लगता। आगे की तरफ नजर जाती है, तो अधेरा घना नजर आता है। इस अंधकार को तोड़ना है, वरना यही जीवन शेष हो जाएगा। शरीर में शक्ति हो, मुसीबतें सामने हजार हों और आदमी उनमे जूझता हुआ आगे निकल जाए।

दयालजी साहब दिल को मजबूत बना रहे हैं। गांव के दुःख-दर्द और कठिनाइयों को आत्मसात् कर लेने की तैयारियां कर रहे है। गाव में आए हैं, तो

पूरी तरह गाव का बनकर रहना है। सफेद-पोशी को कम करना है, सिगरेट की जगह हुक्का इस्तेमाल मे लाना होगा। रूस-अमेरिका को भूलकर गन्ने-गुड़ की बात करनी होगी। भैंस-बकरी की बात ·।

दयालजी सब करने को तैयार है, पर बिरजा का क्या हो? उसका ख्याल बिलकुल पीछा नही छोडता। सोचकर दयालजी सुस्त हो जाते। कैसा परिवर्तन है। बिरजा को वह कितना प्यार करते थे। लगता है कि अब वह मन के उतने करीब नहीं, या वे स्वय ही उससे दूर होते जा रहे हैं। बिरजा की गोल-मोल उजली बाहो से उनका ध्यान हटता जा रहा है। शहर मे रहते हुए वे बिरजा के सौंदर्य मे वृद्धि की कामना ही करते रहते। लेकिन गाव के इस वातावरण मे, उस तरह की चमक-दमक और खिचाव से मन हट गया। यह मिट्टी ही ऐसी है कि मन मे वैसा कुछ नही रह जाता। बिरजा की अपेक्षा अब गाव की दूसरी औरतें ही दयालजी साहब को भली लगती है। अलगोजे-सी पतली कलाइया, बैंगन जैसी गोल और उठी हुई नासिका और सबके चेहरे जैसे धूप मे सुखाए हुए गोभी के फूल हों। दिन-भर घोड़ों की तरह काम में लगी रहती हैं। धन्य हैं ये गाव की औरतें···!

दयालजी के पास ये औरतें कभी आती हैं तो बात-ही-बात में कह देती हैं—काम सबको प्यारा है, चाम किसी को प्यारा नही।

उनकी बातों का अर्थ बिरजा समझ तो जाती है, पर कहती कुछ नही। समझ तो तभी गई थी, जब शहर से गाव लौटी थी। उसी दिन महसूस किया कि कलाइयो का यह गोरापन और गहने-कपड़ों की चमक-दमक गाव के लिए किसी काम की नही। ये बातें शहर के लिए जरूरी है। गांव वाले इन चीजों को बर्दाश्त नहीं कर पाते। गाव की सुंदरता शरीर मे नहीं। शरीर के अंदर रहने वाली उस शक्ति मे है, जो गोबर-कीचड़ से खेलती है। घास-पानी, चौका-बर्तन और फिर रात-दिन मिट्टी में लोटती है, उस शक्ति के बिना सुंदरता का कोई मूल्य नही।

काम सबको प्यारा है! बिरजा बहू मन-ही-मन उबलने लगती। क्या जिंदगी है इन गांव वालों की। रात-दिन काम। आराम का कहीं नाम नही। आखिर इतना सारा काम किसलिए है? जीवन में कभी एक साथ मिल-बैठकर कुछ उड़ाया नही, तो क्या कमाया। रात-दिन कमाने पर जोर है। यकायक बिरजा को ख्याल आता है कि यह खाने-कमाने की बात जैसे उसी को लेकर उठ खड़ी हुई

है। सब लोग तो अपना काम कर ही रहे हैं। मैं ही हूं, जो कुछ नहीं करती। खाते-कमाते सब अपने लिए हैं, पर दूसरे को बेकार बैठे भी नहीं देखना चाहते। गांव के रिवाज के मुताबिक न चलने वाला आदमी गांव-भर के लिए एक तरह का बोझ बन जाता है।

इन लोगों को मेरी सामर्थ्य पर संदेह होने लगा है। ये समझते हैं कि शहर में रहने वाला आदमी जैसे कुछ कर ही नहीं सकता। सोचती रही बिरजा बहू। सोच-सोचकर कसमसाती रही। गांव के जीवन में उतरने की शुरूआत कहां से हो। सबको काम प्यारा है, तो वह भी अब पीछे नहीं रहेगी।

तब पहली बार चीना ने बिरजा बहू को घर से निकलते हुए पाया। चिट्-खजली कलाइयां और हाथ में पैनी धार वाला हसिया।

देखूं, क्या करती है। सोचता हुआ चीना उसके पीछे हो लिया। कुछ ही दूर खेत में पहुंचकर बिरजा ने देखा, उसके खेत कंटीली झाड़ियों से गुंथे हुए हैं। गांव की जिंदगी इसी तरह कांटों की सेज के मानिंद उसे लगने लगी। इन्हीं कांटों के ऊपर कदम रखकर चलना है। सोचकर उसने झाड़ियों पर दुहत्थी धावा बोल दिया।

देखकर चीना मन-ही-मन मुसकरा उठा। वह जानता है कि शरीर की शक्ति से बढ़कर यदि कोई चीज है, तो वह आदमी की हिम्मत ही हो सकती है। किसी काम के लिए यदि मन में उत्साह पैदा नहीं होता, तो सारी शक्ति धरी की धरी रह जाती है। बिरजा बहू में यह हिम्मत देखकर वह प्रसन्न हुआ। पास जाकर बोला—"क्यों भौजी, इन झाड़ियों को एक ही बार में सफा करने की ठान ली है?" बिरजा ने मुड़कर देखा, चीना को अपने पास खड़ा पाकर वह धीरे-से मुसकरा दी। बोली, "जितना कुछ हो सकेगा, वह करूंगी।"

चीना उसके पास बढ़ आया। बोला—

"अच्छा, तो थोड़ा ठहर जाओ। यह हसिया मुझे दो। आज बैठकर तुम सिर्फ इतना देख लो कि किस तरह झाड़-झंखाड़ का सफाया किया जाता है। इसके बाद तुम सब कुछ सीख जाओगी।"

उसकी फूल-सी काया पर तरस खाते हुए चीना ने उसके हाथ से हसिया ले लिया और देखते-देखते एक खेत की मेंढ साफ कर डाली। फिर बिरजा भौजी को दूसरे खेत में ले जाकर, बातों-बातों में उसने दूसरा खेत भी बना लिया। फिर

तीसरा और चौथा…। बिरजा को गांव की बातों में लगाकर वह काफी काम कर गया। भूल गया कि उसे अपना भी कुछ काम करना है। लेकिन अपना क्या काम पड़ा है चीना का! बीवी-बच्चे नहीं। आगे-पीछे कुछ भी तो नहीं है उसका। खेती की कुछेक टुकड़ियां है, उन्हें चाची के सुपुर्द कर दिया है। लोग कहते हैं कि वह सच्चा समाज सेवक है, पर साथ ही उनका कहना है कि ज्यादा सच्चाई भी किसी काम की नहीं।

उस दिन शाम होने पर वह बिरजा भौजी को अपने साथ घर लौटा लाया। आज वह कितना काम करके आई है, यह बात चीना ने जब दयालजी को बताई, तो वे प्रसन्नता से फूल उठे। सोना कसौटी पर खरा उतरने वाला है, सोचकर उनका पुरुषत्व जाग उठा और तब वे बिरजा के साथ स्वयं भी खेतों की ओर जाने लगे। एक ही दिन में हथियार चलाने की कला वे बिरजा से सीख गए। सब अपनी जमीन में रोज ही कुछ न कुछ कर आते। फिर कुछ दिनों के भीतर वह बीहड़ बाझ धरती अच्छे किसान की खेती जैसी लगने लगी। एक साथ मिलकर काम करने में इन दोनों प्राणियों को जिस आनन्द का अनुभव होने लगा, वह जीवन में पहली बार मिल रहा था। तब से इस आनंद की खोज बराबर रहने लगी। बिरजा बहू की कलाइयां पहले जैसी आकर्षक नहीं रह गई थीं, पर दयालजी साहब अब उन बाहों में ज्यादा खूबसूरती पाते हैं। दयालजी के मन में संतोष है कि एक नई दुनिया का निर्माण होता चला जा रहा है।

अब दयालजी साहब को एकता कमेटी का अध्यक्ष चुन लिया गया है। उनके अनुभवों से फायदा उठाने की बात है। खेती में गांव वालों की दिलचस्पी बढ़ने लगी है। जब उजड़ा घर बस सकता है, तो बसे हुए घर तरक्की क्यों न करेंगे। सरकारी अनुदान से सड़क और पानी की व्यवस्था गांवों में हो गई है। पास पड़ने वाली नदियों से छोटी-बड़ी गूलें निकाल ली गई हैं। पानी घर के पास तक पहुंचने लगा है। लेकिन जमीन का क्या हो। लोगों के पास इतनी जमीन कहां है कि साल-छः महीने के लिए भी दाना मिल सके। जमीन की कमी के कारण भी लोगों को बाहर जाना होता है। शहरों की खाक छाननी पड़ती है। इस समस्या का हल क्या है?

तब एक दिन चीना की नजर भैरोंधार पर पड़ी। उपजाऊ और इतनी लंबी-चौड़ी जमीन को लोगों ने बंजर बनाकर छोड़ दिया है। क्यों न इस जमीन को

आबाद किया जाए। सोचकर चीना ने भैरोंधार की जमीन को आबाद करने का प्रस्ताव मीटिंग में रख दिया। मीटिंग में इस प्रस्ताव के आते ही हंगामा मच गया। सदस्यगण घबरा उठे। अब यह आदमी जरूर कोई अनिष्ट खड़ा करने वाला है। इस गांव मे रहे-सहे लोगों की जान लेना चाहता है। भैरोंधार पर हथियार उठाना···भला किसकी मजाल है कि उधर देख भी सके! भैरों महाराज के प्रकोप से आदमी क्या—पशु-पक्षी तक इस गांव में न बचेगा। हैजा, महामारी और तरह-तरह की विघ्न-बाधाओं को निमंत्रण देना है।

कमेटी के सदस्यों ने साफ कह दिया कि उस जमीन के बारे में कुछ भी सोचना हमारे बस की बात नहीं है। कुछ सदस्य तो इस प्रस्ताव के आते ही मीटिंग से उठकर चल दिए।

उस रात चीना को नींद नहीं आई। वह रात-भर सोचता रहा। भैरों देवता की यह कैसी पकड़ है जो आदमी को सोचने-समझने तक का मौका नहीं देती। इन देवताओं ने आदमी को जकड़ लिया है, या फिर स्वयं अपनी कमजोरियों के कारण आदमी जकड़ा गया है। सोचता है चीना—देवता देवता ही हैं। वे हवा में रह सकते है, पानी मे निवास कर सकते है। देवताओं के लिए रहने-बसने की क्या कमी है। जरूरी नहीं कि देवता धरती पर ही रहें। धरती का वासी तो आदमी ही है। यह भैरों महाराज इतनी लंबी-चौड़ी जमीन को हड़प किए बैठा हुआ है। इन देवी-देवताओं ने भी गांव के आदमी को शहर का रास्ता दिखाया है। सोच-समझ की कमी के कारण आदमी वनमानुष की तरह इस धरती पर रह रहा है। शोषण का एक तरीका यह भी है कि आदमी को तंत्र-मंत्र और अध्यात्म की तरफ मोड़ा जाए। उसे मोक्ष की घुट्टी पिला दी जाए। ताकि वह अपनी समझ की एक सीमा बनाकर रहे और बार-बार उसी सीमा से टकरा कर रह जाए। रास्ते बंद हो जाते हैं, तो चेतना अपने आप स्थिर हो जाती है।

इसी बात को नागा बाबा ने एक दिन अपने प्रवचन मे बड़ी संजीदगी के साथ रखा था। उन्होंने कहा था—"जहां जीवन है, मोक्ष भी वहीं है। मरने के बाद तो आदमी भूत-प्रेत ही बन सकता है।"

सोचता है चीना—कहां है जीवन? लोग केवल जिंदा है वह भी अपनी कीमत पर नहीं, देवी-देवताओं की कृपा पर। उनकी प्रसन्नता की भीख लेकर जिंदा हैं। अपने आप को कहीं-न-कहीं समर्पित कर देने के बाद जिंदा हैं।

भैरों देवता, नरसिंघ देवता, गोल्ला देवता··· । देवता नही, भूत-प्रेत···। चीना रात-भर सोचता रहा। इस मर्ज की क्या दवा हो सकती है, पर दवा हो क्यो नहीं सकती।

कुछ दिनों बाद फिर मीटिंग बुलाई गई। भैरोंधार की जमीन पर हलजोत करने की चर्चा उठाने के पहले चीना ने अपना सपना सुनाकर सदस्यो को चकित कर दिया। आधी रात के वक्त भैरों महाराज उसके सपने मे आए और अपना रूप दिखाते हुए बोले कि गाव की बूढी दादी ने मेरी थाती पर जो रेख खीच दी है उसके भीतर हलजोत करने से गड़ा हुआ सोना मिल सकता है। तुम्हारे पुरखों ने वहा सोने का गड़ंत कर रखा है। तुम चाहो तो उसे अब बाहर निकाल सकते हो।

चीना का सपना सुनकर सदस्यों को आश्चर्य होने लगा। साथ ही विश्वास हो आया कि बात बिलकुल सही है। भैंरोधार की इस बीहड़-बाझ धरती का त्यागन भी दादी के एक रात के सपने का कारण है। पच्चीस वर्ष पहले दादी को सपना दिया था भैंरो महाराज ने। दादी के सपने में आकर बोले कि—गाव की अलाबला मेरे ऊपर आ गई है, इसलिए मेरा ध्यान भंग हो गया है। दादी को आदेश दिया था कि—तू मेरी भक्तिन है। ऐसा काम कर, जिससे मेरा ध्यान फिर से जम जाए। मेरी जोत जगी रहे, तभी तुम गांव वालों को सुख-शांति मिल सकती है।

सुबह होते ही दादी ने भैंरोंधार के उस सारे इलाके पर लक्ष्मण-रेखा खीच दी और गाव-भर में ऐलान कर दिया कि जो इस रेखा का उल्लंघन करेगा, भैंरो महाराज उसका जाने क्या अनिष्ट कर देंगे। इस बात को गाव के सभी लोग जानते हैं।

मीटिंग मे जब चीना के सपने की चर्चा उठी, तो बूढे लोगो ने उसकी बात का समर्थन किया। दादी का यह सपना बिलकुल सही था। सपने का बयान करते हुए, भैरों महाराज का आदेश दादी द्वारा सुनाए जाने पर भी लोगों ने भैंरोंधार पर डंगर छोड़ दिए। इत्तिफाक से जीतू की सजीली जोड़ी का एक बैल भैंरोंधार से फिसल कर निकम्मा हो गया। उस पूरे वर्ष जोड़ी का बैल न मिलने के कारण उसकी जमीन बांझ रह जाती, यदि वह खीमू मिस्त्री के हाथ न जोड़ता तो···। खीमू मिस्त्री ने अपने ठाकुर से कई बार हाथ जुड़वाए, मिन्नतें करवाईं, तब जाकर अपना हल-बैल उसे दिया।

आदेश का पालन न करने से भैंरों महाराज बलि न लेगा तो क्या करेगा। वही हाथ च्वीमू मिस्त्री के लिए जुड़ते हैं और वही भैंरों महाराज के लिए। भैंरों महाराज और उस अछूत में जैसे कोई फर्क ही नहीं। भली करें भैंरों महाराज! देवता के प्रकोप से गांव बचा रहे, सोचकर दादी आज भी उस तरफ धूप-बत्ती दिखाती है, दूध मिले जल का अरघ चढ़ाती है। और खाते-पीते उसका सिमरन कर लेती है। भैंरोंधार के बीचों-बीच—टिप्पे में, गांव का यह कुलंकारी देवता विराजमान है और ठीक उसकी नाक के नीचे है—सुंदर, समतल फैली हुई जमीन।

चीना ठीक कहता है। उसे जरूर सपना हुआ है। कभी-कभी यह देवता लोगों के सपने में आता है और कई बातें बता जाता है। चीना की बात में सच्चाई पाकर मीटिंग में उस पर विचार करने का निश्चय किया गया। एक आदमी को भेजकर दादी को उसी वक्त बुलाया गया। दादी सपने का अर्थ निकालने में माहिर है। सपने के अलावा आंख की फड़क, दिल की धड़क और शब्द-सुरों का संकेत तथा उनका खुलासा, दादी के अलावा दूसरा कोई नहीं कर सकता।

मीटिंग में आकर दादी ने सपने की बात जब सुनी तो उसे कुछ घबराहट-सी महसूस होने लगी। फिर चीना की ओर देखती हुई दादी बोली—"तेरा सपना सच है रे! तेरा बाप इसी भैंरों महाराज का भक्त था। उसी भक्ति के कारण तू पैदा हुआ है। अब भैंरों महाराज ने तुझे सपना दिया है, तो यह भी भक्ति का ही परताप है। भैंरोंधार की खुदाई करने से गढ़ा हुआ सोना जरूर मिलेगा।"

दादी की राय लेना जरूरी था। उसकी ओर से कोई रुकावट न होते देख मीटिंग में लोगों के चेहरों पर खुशी की लहर दौड़ गई। गढ़ा हुआ सोना मिल गया, तो सभी के भाग खुलेंगे। सब लोग मिलकर हिस्सा बंटा लेंगे।

दूसरे दिन से दादी का प्रचार शुरू हो गया। दादी के पच्चीस बर्ष तक धूप-बत्ती दिखाने का नतीजा है कि भैंरों महाराज ने गांव के लोगों पर कृपा की है और चीना को सपना दिया है। अगले दिन भैंरोंधार पर खुदाई का काम शुरू हो गया।

बन्ध्या धरती की कुंआरी देह पर पहली चोट चीना ने अपने हाथों से दी। इस पहली चोट में कुदाली की देह झनझना उठी। चीना के हाथ कांप गए। थोड़ी आशंका उसके मन में व्यापी। भैंरों महाराज की सरहद के भीतर उसने हथियार चला दिया है। कहीं कोई अनिष्ट देखना न पड़ जाए। निरंकार, भैंरों महाराज

की सरहद। लक्ष्मण-रेखा की तरह। महाप्रतापी रावण इस रेखा के इर्द-गिर्द टापता रह गया। उस रेखा को लांघकर भीतर जाने की हिम्मत उसमें कहां थी? लेकिन धोना की हिम्मत देखते ही बनती है। मिट्टी की तह के नीचे जमे हुए पत्थर पर यह चोट पड़ी। देवता की छाती पर हथियार उठाना कम साहस का काम नहीं। लेकिन कुछ न हुआ, होगा भी कुछ नहीं। धोना को लगा कि अब तक कलाइयों को जकड़ कर रखने वाली कोई जंजीर तड़क कर टूट गिरी है। हाथ की स्वतंत्रता के साथ अब तो उसने मस्तिष्क को भी पूरी तरह स्वतंत्र पाया।

दूसरी चोट पड़ी। कुदाली का लोहा मिट्टी की जमी हुई परत को फाड़ गया। फिर तीसरी चोट और उसके बाद लगातार चोट पर चोट…। एक नहीं कई कुदालियां एक साथ भैरों महाराज की छाती पर चोटें करने लगीं। रस-शोषक वृक्षों को गिराया जाने लगा। कंटीली झाड़ियों का इस तरह से सफाया किया गया कि जैसे तेज उस्तरे से दाढ़ी को घोट डाला हो। धरती के गर्भ में धंसी हुई कांटेदार झाड़ियों की जड़ों को दु:खती दाढ़ की तरह खींच लिया गया और इसके बाद सारे गांव के मर्द-औरतों ने मिलकर भैरोंधार को उलट देने का निश्चय कर लिया।

इस जमीन के एक किनारे पर कमजोर चश्मा है। भैरों महाराज का पानी…। समतल धरती पर यह पानी कुछ दूर फैलकर रह गया है। जिसके कारण धरती का यह कोना सदा हरा-भरा दिखाई देता है। इस पानी को कोई नहीं पीता। एक बार जिद में आकर पुरुषोत्तम ने यह पानी पी लिया कि जिंदगी-भर गठिया-वात ने उसकी गठरी बनाकर रख दी और अंत में बेचारा जब मरा, तो खूब भीक-भीक कर मरा। भैरों महाराज के पानी को जूठा करने का यही नतीजा उसे मिला। इस पानी की बदौलत झाड़-झिंखाड़ और कांटेदार पेड़ इस देवता की धरती पर उग आए हैं। जंगली फूल-फलों वाले इन पेड़ों पर खूब सुंदर फल निकल आते हैं। डालियां लद जाती हैं। "भैरों महाराज ही इन फल-फूलों को खाता होगा।" गांव के बच्चे आपस में बातें करते हैं। "हां रे भई! आजकल भैरों देवता पके हुए मेहलू, अंजीर और शहतूत के मजे चख रहा होगा। देखकर मुंह में पानी भर आता है।"

छोटे-बड़े पेड़ों पर नर्म पत्तियों की घास और जमीन पर उग आने वाले

मखमली घास को देखकर गांव की घसेरियां ललचा कर रह जाती। पर क्या मजाल कि घास का एक तिनका भी छू ले। गाय-भैंसों के थन से दूध के बदले खून की धार निकल आएगी। हर वर्ष यह घास यूं ही उगती है और वैसे ही सूख जाती है। हर वर्ष इन पेड़ों पर सुंदर फल-फूल आते हैं और झड़ जाते हैं।

पच्चीस वर्षों से क्या कर रहा है यह देवता! इतनी बढ़िया जमीन को दबा कर बैठ गया है। दादी भी अभी जिंदा है। चीना को लगता है कि जब तक यह दादी और भैरो महाराज इस धरती पर रहेंगे, यह धरती बांझ ही रहेगी। गांव की घसेरियां घास-पात के लिए जगह-बे-जगह जाकर हाथ-गोड़ तुड़वाती रहेंगी। शहतूत और अंजीर से लदी डालियों को देखकर गांव के बच्चे तरसा करेंगे और इन फल-फूलों का रस कीड़े-मकोड़े ही चाटेंगे।

नागा बाबा का कहना है कि पुराने रीति-रिवाजों की लीक पर चढ़ने वाले लोगों के लिए यही सजा ठीक है। घर में अन्न का दाना नहीं है, बाल-बच्चे भूख से तड़पा करें और ये भक्त लोग कर्जा लेकर भूत-प्रेतों को खील-बताशे बांटे, उन्हें खसिया भेंट करें—तब जाकर ये भूत-प्रेत प्रसन्न हों। इनसे अच्छा तो ब्लाक का प्रमुख या पटवारी है, जो एक बार की भेंट में पीछा छोड़ देते हैं। लेकिन ये कुलंकारी देवता भेंट चढ़ाने के बाद भी छाया-छल-छिद्र बनकर पीछा नहीं छोड़ते।

इन पच्चीस वर्षों में न जाने कितने जीवों का अंत इस देवता की थाती पर हुआ है, कितने नरसिंह पूजे गए, कितनी छायाएं उतारी गईं। चीना को लगता है कि जब तक यह दादी और उसका देवता इस धरती पर रहेगा, तब तक सूरज की किरणें भी उजाले के बदले अंधेरा ही बरसाती रहेंगी।.'

वह मन-ही-मन मुसकरा रहा है। भैरों देवता…हुंह…। देवता होकर भी आदमी को दुःख दे, तो आदमी और देवता में क्या फर्क रह जाता है। इस देवता की बदौलत गांव वालों को क्या-क्या नहीं देखना पड़ा है। 'लोगों की जिंदगी को इन देवताओं ने जिया है। हमारे पुरुषों का जीवन इन देवताओं के मनाने में बीता है और ये देवता हैं कि…।

एक तरफ से खुदाई शुरू हुई है। अब तो गांव वालों के दिमाग में एक ही बात है। सोना है, तो सोने की सिल्लियां होंगी, या फिर मोहरें। कुछ भी हो, मिलेगा जरूर। भैरों महाराज का सपना कभी झूठा नहीं पड़ सकता। इसलिए सोच-

समझ कर चोट करनी पड़ती है। कहीं से कुछ टूट-फूट न जाए।

सीमू मिस्त्री ठीक कहता है। यह जमीन जरा ढलवां किस्म की है, इसलिए खुदाई करने में ज्यादा मेहनत नहीं। जरा-भर जोर लगाने की बात है कि मिट्टी के ढेले अपने आप उठकर दूसरी तरफ लुढ़क पड़ते हैं। इस मिट्टी की तह के अंदर भारी पत्थर जमे हुए हैं, उन्हें उखाड़ फेंकना जरूरी है। हो सकता है, ऐसे ही किसी बड़े पत्थर के नीचे सोना दबा पड़ा हो। सीमू मिस्त्री उन उखड़े हुए पत्थरों को ढलवान पर जमाता चला जा रहा है।

"जब इन पत्थरों को खपाना ही चाहते हो, तो क्यों नहीं एक के ऊपर दूसरे को जमा देते ?" चौना सीमू मिस्त्री को समझाता है। उसे ऐसा करने में कोई आपत्ति नहीं। दूसरे लोग खुदाई कर रहे हैं और सीमू मिस्त्री पत्थर की छाती पर पत्थर को जमाता चला जा रहा है। निचली सतह से एक दीवार उठती चली जाती है। बीच वाली खाली जगह को दीवार के बराबर तक, मिट्टी के ढेलों से पाटा जा रहा है, जिससे ढलवा जमीन सब तरफ से समतल बनकर ऊपर उठती जाती है।

आठ दिन···दस दिन···आज पंद्रहवां दिन है। हर सुबह सोना मिलने की उम्मीद बनती है। लेकिन शाम तक खुदाई करने के बावजूद जब कुछ नहीं मिलता, तो थोड़ी निराशा होती है। कहीं भैरों महाराज झूठ तो नहीं बोल गए ! राम···राम ! छिमा करना देवता ! तेरी करामात पर सुबह होने लगा है। शाम को थोड़ी-बहुत निराशा होती है, पर सुबह होते ही दुगुने उत्साह से लोग आ जुटते हैं। आज जरूर कुछ मिलेगा। न सही आज···कल, परसों···।

भैरोंधार की ढलवां जमीन समतल बनती जा रही है। गहरी और गद्‌गद एकसार मिट्टी किसी कुंआरी लड़की की सपाट देह की तरह मन में गुदगुदी पैदा करती है। इस बार पानी बिखेरने वाले चश्मे को चारों ओर से बांध दिया गया। एक बड़े तालाब के रूप में पानी एक तरफ जमा हुआ जाता है। अब भैरोंधार की चप्पा-चप्पा जमीन पर से कंकड़-पत्थरों को चुनकर एक जगह जमा दिया जाने लगा। कहीं सोने के बाहर मिट्टी जम गई हो और कुदाली की नोक से टूट-कर वह कंकड़ बन गया हो। बहुत खोजबीन की गई। जमीन को उलट कर दिया। लेकिन सोना तो फिर भी नहीं मिला। सोना तो रहा दूर, कहीं लोहे का एक कण भी देखने में नहीं आया।

झूठ…बिलकुल झूठ…। झूठा है यह भैरों देवता…। बाईस दिन तक अपने घर का काम छोड़कर दिन-रात यहां काम करने से क्या मिल गया हमको…? हम दादी से अपनी बाईस दिन की मजूरी रखवा के छोड़ेंगे। उस कलूटी बुढ़िया की गर्दन पर सवार होकर पूछना चाहिए कि कहां पर सोना दाब रखा है तेरे भैरों महाराज ने ?

औरत जात…। पच्चीस वर्ष तक किसी को भैरोंधार की तरफ झांकने नहीं दिया। ऐसा ही झूठ उसने तब भी बोला था। खीमू मिस्त्री का गरम दिमाग…। अब वह दादी की ऐसी केर बाधेगा कि…। साथ ही चीना की खैर नहीं, क्योंकि सपना उसी को हुआ था।

दादी सोचती है, भैरों महाराज या तो झूठ बोल गए, या फिर चीना की ही इसमें कोई चाल है। वह भैरों महाराज की पोल सबके सामने खोलना चाहता है। बड़ा बदमाश लौंडा है यह! दादी के पीछे पड़ गया है। इसी कारण दादी बीमार पड़ गई है। कहीं मर ही न जाए।

मरती है, तो मरे। भाड़ में जाए। हम तो चीना को ही पकड़ेंगे। सपना उसी को हुआ था। वही हमारी मेहनत-मजूरी देगा।

लेकिन जान बची चीना की। अब तक गाव वालों ने मिलकर उसका गड़ंत कर दिया होता। ऐन वक्त पर मेहरबानी की। चीना को दूसरा सपना दिया है। अगले दिन कमेटी की मीटिंग में चीना ने फिर अपना सपना सबको सुना दिया।

इस बार भैरों महाराज प्रसन्न थे, बोले कि इस जमीन के नीचे दबा हुआ सोना अब तक मिट्टी बन चुका है। यदि तुम लोग उसे पाना ही चाहते हो, तो कुछ दिन रुक जाओ। यह मिट्टी बना सोना अपने-आप बाहर निकल आएगा। मेरी जिस थाती को तुमने अपनी मेहनत से बनाया है, उसमें फिलहाल धान के पौधे उगाकर देखो। फिर देखना, धान की बालियों पर फूटने वाले बीजों में सोने के बीज फूट पड़ेंगे और इस तरह गढ़ा हुआ सोना तुम्हें मिल जाएगा।

धान की बालियों पर सोने के बीज लगने वाली बात लोगों के मन में संदेह पैदा करती है। यह कैसे हो सकता है। सदस्य लोग एक-दूसरे के चेहरे पर देखते हैं। मानो पूछ रहे हों कि क्या यह संभव है ?

दयालजी साहब मीटिंग के अध्यक्ष बने हैं। ऊंची तिपाई पर बैठे मन-ही-मन

मुसकरा रहे हैं। उन्हें चीना की बुद्धि पर आश्चर्य होता है। चीना को अब वह अच्छी तरह पहचान गए है। यह आदमी हर तरह से काम लेना जानता है। काम लेने के लिए हर तरीके को अपना रहा है। जवाब नहीं है चीना का···।

सदस्यो की अनिश्चितता को भांपकर दयालजी बोले, "चीना का सपना बिलकुल सही है। तुम लोग मानते हो कि सोना-चांदी कहीं आसमान से छूटकर तो नहीं आता। सोना-चादी, हीरा-मोती सब इसी धरती मे पैदा होते है। इस धरती की महिमा को समझने की जरूरत है। हमारे वेद-पुराणों मे धरती को माता कहा गया है। वह माता जो अपने बेटे की हर जरूरत को पूरा करती है, उसके लिए तरह-तरह के कष्ट झेलती है। हमारे पास आज जो कुछ है, वह सब इसी मिट्टी से उपजा है। भैरोधार की धरती में अगर कही सोना है, तो वह जरूर बाहर निकल कर आएगा। ऐसे ही, जैसे कि गन्ने मे मिठास बनकर आती है। फूल मे खुशबू बनकर फूटती है। ऐसे ही धान की बालियो मे सोना उगकर ऊपर आएगा। जरूर आएगा।"

ठीक है, ऐसा करके भी देख लो। गांव वालो मे फिर जोश भर आया। भैरोंधार की मखमल-सी मुलायम धरती पर धान के पौधे लहलहाने लगे। जरूरत के मौके पर बड़े तालाब के रूप मे जमा किया हुआ भैरो महाराज का पानी उस फसल को दिया गया। तंदुरुस्त पौधों के मुंह पर बालिया फट पड़ीं। तब कुछ दिनों बाद उस तरफ से आने-जाने वाले की जुबान पर एक ही बात सुनने मे आती—जमीन सोना उगल रही है। हां, सोना ही···। सुनहरे रंग के बीजों से झुकी बालिया···। तब कौन कह सकता है कि वह सोना नही है!

बड़ा चालाक लौंडा है यह चीना···। मन-ही-मन दादी प्रसन्न है। उसकी एकता कमेटी का यह पहला कदम था जिसने लोगों का ध्यान खेती की तरफ आकर्षित किया। इससे पहले खेती का महत्त्व गांव के लोग क्या समझते थे। कहते हैं कि चीना को भी इस बारे में कोई ज्ञान नहीं था। उसके पास जमीन कहां है? जानकर लोग कहते हैं कि चीनी खेमे मे रहकर उसने बहुत-कुछ यहीं बातें सीखी हैं। चीनी लोग खेती-बाड़ी करने मे माहिर हैं। वे लोग अपने ही

तरीके से खेती करते हैं और अपने ही तरीके से रहते हैं। भैरोंघार की बंजर धरती की काया-पलट जिस तरीके से हुई उस पर लोगों को शक होने लगा है। देवता की जमीन को आबाद कर दिया है। इसी बात पर एक दिन तकरार बढ़ गई। लोगों ने कहा—यह आदमी देवी-देवता पर विश्वास नहीं करता। यह चीन देश का दलाल है। यह हमें उसी तरीके से मिलकर खेती करना सिखा रहा है। कुछ देर बाद यह हमें विरोधी पार्टी में बदल देगा। यहां चीनी खेमे को मजबूत कर देगा और फिर एक दिन···।

नागा बाबा को इन्हीं बातों पर ताव आता है। कौन लोग हैं जो इस तरह की बातें फैला रहे हैं? बाबा का क्रोध भड़क उठता है। गांजा पीते हैं, तो आंखें अंगारों की तरह दहकने लगती हैं। तब तो जुबान पर भी वश नहीं रहता। नागा बाबा ने जब सुना कि गांव के लोगों ने चीना के तौर-तरीके अपनाने से इनकार कर दिया है और अपने हो तरीके से खेती करने की बात कर रहे हैं, तो बाबा जैसे पागल हो उठे। तब जो भी सामने आया, उसी पर टूट पड़े।

"···स्सालो···अपना तरीका खोजते हो। अब तक कहां गया था तुम्हारा वो तरीका। पेट में भूख की ज्वाला भड़क रही है और तुम पोथियों में अपना तरीका ढूढते फिर रहे हो। क्या दूसरे का तरीका अपनाने से तुम्हारी देश-भक्ति खत्म हो जाती है? ऐसी देश-भक्ति तुम में है, तो दूसरे देशों से आया हुआ माल कैसे हजम हो जाता है?"

दयालजी साहब से जाकर बाबा बोला, "महाराजजी! काम करने वाला आदमी किसी एक तरीके पर बंधा नहीं रहता। जिससे कारज सिद्ध हो जाए, वही तरीका सबसे अच्छा है। इस बात में हम चीना की तारीफ करते हैं। इस आदमी ने भैरोंघार की जमीन को भूत-प्रेतों से छुड़ाकर इन्हें दिया है और साथ ही यह भी समझा दिया है कि खेती पर काम कैसे करना है। इन स्सालों को क्या पता था कि जमीन क्या चीज है कि उसमें किस तरह सोना उगाया जाता है।"

बाबा दो टूक बात करते हैं। उनकी समझ में बात को बैठना चाहिए। बस, फिर वह सभी कुछ ठीक कर लेते हैं।

इन गांवों में अपनी तरह की कमियां हैं। बिगाड़ पैदा करने वालों की कमी नहीं। जरा-सी बात पर ऐसी अड़ंगियां लगाते हैं कि बनने वाली अच्छी-से-अच्छी योजना भी झगड़े में पड़ जाती है। एक चिनगारी सुलगती है, और वही लपट

बन जाती है। बाबा ने ऐलान कर दिया कि एकता कमेटी के काम में जो अड़ंगी लगाएगा, उसे नही छोड़ेंगे। चीना गलत आदमी नही है। उसे काम करना आता है, गांव के हक में वह गलत काम नही करेगा।

पिछले वर्ष खेतों मे अच्छी पैदावार हो गई थी। इस बार भी अच्छी फसल हो जाती। लेकिन उसके लिए मेहनत चाहिए। पहाड़ पर खेती का दारोमदार मौसम पर बनता है। मौके से बादल पानी बरसा दें, समय पर घाम पड़े तो अन्न का दाना हाथ आ जाता है। इस मंडुवा-दाना के लिए तन पर धूल-मिट्टी को धारण करना पड़ता है। धरती के अंदर रखा हुआ बीज और पेट मे पलनेवाले बच्चे की हालत एक जैसी है। इनकी जैसी देखभाल होगी, वैसा ही फल मिल जाएगा। यह बात नही कि खेत मे दाना छोड़ दो और कचहरी के चक्कर लगाते रहो।

पौड़ी के मानसरोवर होटल में बैठा हुआ शेरसिंह यही कुछ सोच रहा है—क्या हो गया है इन गाव वालों को—एकता कमेटी मे कुछ लोग ऐसे घुस आए है जो बाहर से एकता की बात करते तो हैं, पर भीतर-ही-भीतर अपना काम भी कर रहे हैं। ये लोग तमाम कोशिशों को नाकामयाब कर देंगे। ये लोग कौन हो सकते है? सोच रहा है शेरसिंह! उठकर खिड़की से बाहर की ओर झांकता है। मौसम की आंख-मिचौनी और धूप-छांह को देख रहा है। खेती का समय है। लेकिन यह मौसम उसकी पकड़ मे नही आ रहा। कल का सारा दिन भी यों ही बेकार चला गया। टिप्…टिप्…टिप्…न ठीक तरह से बारिश हुई न कड़ाके की धूप ही। दिन-भर आसमान पर बादल तैरते रहे, जो भीगे कंबल की तरह टिप्-टिप् चू पड़ते। सुबह से शाम तक यही टिप्-टिप् चलती रही और रात को आसमान शीशे की तरह निर्मल हो गया। लेकिन सुबह उठकर जब देखा, तो आसमान का रुख फिर से बदला हुआ नजर आया। बादल हैं, पर वैसी टिप्-टिप्…नहीं। सूर्य के मुख पर से बादलों का गीला कंबल कुछ देर के लिए हट जाता, तो पेड़-पौधों पर किरणों की असह्य मार पड़ जाती। भादों की तपन… कड़ी झुलसा देनेवाली गर्मी और धूप…। कहते हैं, भादो की इस धूप मे गैंडे की खाल तक चटख जाती है। जब-जब बादल छंटते, सूर्य की तेज किरणें अग्निबाण

की तरह धरती पर छूटती, तो शेरसिंह का दिल गेंडे की खाल की तरह चटख जाता।

"अह ! मौके की 'बात' पड़ी है, पर बात बिगाड़ दी है इन गांव वालों ने। अबके मंडुवा न हुआ तो खाएंगे क्या…?

शेरसिंह सोचने लगा—'बात' पड़े और मंडुवे की फसल में हलचीरा न पड़े, तो यह मोटा अन्न हाथ नहीं आता। शुरू-शुरू में दुपत्ती वाले पौधे के साथ बेकार का घास-पात, काफी मात्रा में उग आता है। बारिश के बाद सारी फसल को हलचीरे से उलट दिया जाता है और इस तरह से उलटने वाली घास का काम-तमाम, भादों की एक घंटे की धूप कर देती है। खेती करने वाले लोग इसी को 'बात पड़ना' कहते हैं।

पौड़ी के मानसरोवर होटल में बैठा शेरसिंह मुश्किल से हाथ आने वाले इस मौके को देख रहा है और पछतावे की उसांसें भर रहा है। दो घंटे से शेरसिंह का दिल घास की उखड़ी जड़ों की तरह झुलस रहा है—मंडुवा न मिले इनके जन्म लेने वालों को—जिन्होंने इस वर्ष उसकी फसल मरवा दी है। सारे गांव वाले बदनाम हैं स्साले…। अपने खेतों में इस वक्त हलचीरा चला रहे होंगे और मुझे यहां भेज दिया यहां कचैरी में…।

होटल वालों से शेरसिंह ने एक कटोरी शोरबा मांग लिया। गरम शोरबे के साथ वह मंडुवे की रोटी को गले में उतार सका। फिर एक गिलास पानी पीकर उसने जेब से बीड़ी खींच ली। गांव वालों ने ऐसी जल्दी लगाई कि चिलम उठाना भी भूल गया। खाना खाकर तुरंत चिलम का तंबाकू खींचने की इच्छा होती है। चिलम न मिले तो बढ़िया-से-बढ़िया खाना भी बेकार है। चिलम यहां कहां मिले। पौड़ी में अब भला कोई चिलम पिएगा ? एक दिन था जब इस पौड़ी का कोई पूछने वाला नहीं था। देखते-देखते मीलों फैल गई है ससुरी। कोठियां-बंगले, गलियां-बाजार यहां भी बन गए हैं। एक-से-एक बढ़िया होटल। फैशन भी कम नहीं।

शेरसिंह ने झटके के साथ दियासलाई को रगड़ा और बीड़ी सुलगाकर एक लंबा कश खींचा। दो कश खींचने पर ही घोड़ामार बीड़ी का तंबाकू वाला हिस्सा फुक गया। शेरसिंह ने पाया कि बीड़ी का आधे से ज्यादा हिस्सा खाली है—"धत्तेरे की…। बेमानी आ गई है सब तरफ…"

नाक से निकले हुए गंद की तरह उसने बीड़ी को जोर से एक किनारे फेंक दिया और दूसरी बीड़ी निकाल उसका पेट दबाने लगा। वही बात इसमें भी दिखाई दी। उसे अपनी चिलम याद आने लगी। पहाड़ी तंबाकू के ऊपर रखी हुई छिलके की पक्की आग ! लेकिन बीड़ी में कोई चिलम क्यों पीने लगा।

यकायक शेरसिंह को याद आया। वकील ने ग्यारह बजे कचहरी में आने को कहा है। कहा था कि यह आखिरी पेशी है, आज फैसला होकर ही रहेगा। उसने हड़बड़ा कर सामने बैठे मानसरोवर के मैनेजर से टाइम पूछ लिया और चल पड़ा कचहरी की तरफ। कई वर्षों बाद आज कचहरी का मुख देखने को मिला है। लोग कहते हैं, इस जगह आदमी को न्याय मिलता है। मिलता था कभी न्याय…। अपनी आंखों देखी बात है, तब बहुत कम लोग कोर्ट-कचहरियों में आते थे। गांव के लड़ाई-झगड़ों को वहीं आपस में निबट लिया जाता। पंचों के फैसले पर आज भी विश्वास है। पंच-परमेश्वर जहां बैठे, वहीं फैसला हो जाता। एकदम सही फैसला, सबकी तसल्ली वाला…। गांव के अफसर हैं—प्रधान, पटवारी। उनकी बात मानी जाती है। गांव में जरा किसी को शिकायत हुई कि पंचायती चौक में पंच आ बैठते। गांव की सुख-दुःख की बात सुनने वाला यह चौक है। मुद्दई-मुद्दाला दोनों को यहां हाजिर किया जाता और फिर सबके सामने 'दूध का दूध, पानी का पानी' फैसला हो जाता। तब गांव की प्रधानचारी शेरसिंह के पिता के पास थी।

तीस वर्ष पहले की बातें हैं। अंग्रेजों का भी एक जमाना था इस देश में। अंग्रेजी राज क्या बुरा था। शेरसिंह सोचने लगा—अंग्रेजी शासन से लोग किस तरह घबड़ाते थे। दिलों में डर था। लेकिन न्याय भी भरपूर मिलता था। आज भी अंग्रेजी राज के किस्से लोग पीढ़ी में दुहराते हैं। तब लोगों ने जो मजे लिए हैं वह आज कोई ले सकता है ? उनका शासन अपना था। जनता को शुरू में ही कस के रख दिया था उसने…जैसे गंगापार से लाए मस्त बछड़ों की नाक में रस्सी डाल देते हैं, फिर वे चूं-चपड़ नहीं कर सकते। ऐसे ही अंग्रेजी राज का शासन अफसरों और कर्मचारियों की नाक में रस्सी डाल के रखता। जरा किसी ने चूं-चपड़ की कि मार-मार के हंटर साले की खाल खींच के रख दी।। इसलिए लोग बुरी नीयत नहीं रखते थे। बुरे कामों से डरते थे। अगर कोई कानून से बे-कानून चलता पकड़ा गया, तो शासन उसे घड़ी-पल में जकड़ कर रख देता।

उस घटना को लोग भूले नहीं हैं, जब अदवाणी के जंगल में डाकिए को लूट

लिया था। सरकारी पैसा लूटकर डकैत चम्पत हो गए। डाकिए को मारकर वहीं एक गड्ढे में डाल दिया।

अंग्रेज शासन को हर चीज का फौरन पता चल जाता। चारों तरफ हल्ला मच गया। फिर अंग्रेज शासन के खुफिया चल पड़े उसका पता लगाने। अदवाणी का वह घनघोर जंगल…दिन में भी रात का अंधेरा नजर आता। जहां सुबह होती ही नहीं। फिर सात घाटियों की परत वाली जगह। पांच गज की दूरी पर आदमी का पता नहीं मिलता। ऐसी जगह जाकर डाकिए को मारने वाले आदमी का पता पाना, देवताओं के बश की भी बात नहीं। लेकिन वह अंग्रेजों का शासन था।

आस-पास के गांव-घरों से पूछताछ होने लगी। बाहर-अंदर, नदी, घाट-पनघट, जगह-जगह अंग्रेजी शासन के जादूगर बैठे थे। आखिर सुराग लगाकर ही छोड़ा। गांव वालों से पूछा गया। बताने से इनकार किया, तो मार-मार हंटर चूतड़ लाल कर दिए। गांव पर उन दिनों हंटरों की बरसात होती रही। लोगों का टट्टी-पिशाब एक साथ छूट आया। शासन में जहां सब तरह की बातें हैं, वहां हंटर भी काम की चीज है। जिस शासन में डर नहीं, वह भी स्साला कोई शासन हुआ। वह तो भाई-भतीजावाद हो गया। 'चोर-चोर मौसेरे भाई' हो गए। फिर हंटर किस पर चलेगा?

आखिरकार अंग्रेज सरकार को खूनी का पता चल गया। दस दिन के अंदर शासन कर्मचारियों ने उसे पकड़कर इसी कचहरी में हाजिर किया। तब सुनकर लोग दांतों तले उंगली दबाए रह गए कि डाकिए के चाचा गंगाराम ने ही पैसों के लालच में अपने भतीजे का खून किया है।

आदमी का खून…वह भी चाचा के हाथों अपने भतीजे का…। सुनकर लोग दहशत में आ गए। सरकारी पैसे के लिए चाचा भतीजे का खून कर दे। या फिर कोई पुरानी अदावत थी, पर शासन ने सारा कुछ उगलवा दिया। साबित कर दिया कि अदावत नहीं थी सिर्फ पैसे के लिए ऐसा किया है। एक-एक बात गंगासिंह ने अपने मुंह से कही है। मरने से पहले डाकिए ने अपने चाचा गंगासिंह से कहा कि अगर पैसे के लिए ही तू मुझे मारना चाहता है तो यह सारा पैसा ले और चला जा। सरकारी पैसे की खयानत में जो सजा मिलेगी, उसे मैं भुगत लूंगा। पर गंगासिंह के भीतर जाने कैसा राक्षस उठ खड़ा हुआ कि उसने कुछ सुना ही नहीं।

पत्थरों से भतीजे का सिर कुचल दिया। मरते वक्त भतीजे ने कहा— "चचा, अब तो मैं मर ही जाऊंगा। तू घर पहुंचकर मेरी मा को मेरे मरने की खबर तो कर ही देना। कहना कि पहाड़ से गिरकर मर गया है। वरना वह मेरा इंतजार करती रहेगी।"

अंग्रेज शासन ने सारा कुछ उगलवा दिया था। इस साले ने बेटे का वह संदेश उसकी मा को नहीं पहुचाया और फासी पर चढ़ गया। अंग्रेज शासन का कमाल था कि बहुत कम समय मे बड़े-से-बड़ा काम पूरा कर दिखाते थे। मुजरिम की दबी लाश तक को खुदवा कर उसे हर हाल कचहरी मे ला खड़ा करते। ऐसा था उनका शासन ! एक यह भी शासन है। आदमी आंखों के सामने मारा जाता है, लोग देखते है और साफ मुकर जाते हैं कि हमने कुछ देखा ही नहीं। सात खून करने के बाद मुजरिम हवाखोरी करता हुआ सीधे निकल जाता है, किसी की क्या मजाल कि उसे छू ले। अगर कोई घूस-रिश्वत लेते हुए पकड़ा गया, तो घूस-रिश्वत देकर फौरन छूट भी जाता है। सब जगह सच बोलने मे डर लगता है। सच बात मे उलटे ही फस जाने का डर है। यह कैसा शासन हुआ ?

सोचते हुए शेरसिंह के चेहरे पर कड़ुवाहट आ गई और उसने मुंह में इधर-उधर फैले हुए थूक को इकट्ठा कर पच्च् से थूक दिया।

इस कचहरी मे जो भी आता है उसी के चेहरे पर कड़ुवाहट दिखाई देती है। वकीलो की आंखें कव्वे की नुकीली चोंच जैसी लगती है। पौड़ी में आए आदमी के सीने में ये चोचें सीधी उतरती है। आदमी चाहे जैसा हो, आंखों की भाषा कौन नही समझता। इन कचहरी वालो के धंधे ही न्यारे हैं। शेरसिंह अभी पूरी तरह से कहां समझ पाया है कि यहा क्या-कुछ होता है। कि कोर्ट-कचहरी का काम रंडी पेशे से कुछ कम नही। रंडी जहा आकर बैठ जाती है, वही पैसा दौड़ा आता है।

बचपन मे एक बार वह पौड़ी आया था। तब भी वह गाव का प्रधान नही था। बाप के रहते हुए वह कैसे प्रधान हो सकता है ? तब पहली बार वह पौड़ी आया था। अपने मामा के साथ। मामा पौड़ी दिखाने के लोभ से उसे साथ ले आए। दो रुपया उसके हाथ मे थमाकर किसी की तरफ से गवाह बना दिया। मामा के साथ एक दूसरा गवाह था। मामा वकील नही थे, पर पौड़ी के वकीलों को मामा की हर वक्त तलाश रहती। वकीलों को ऐसे लोगो की जरूरत पड़ती है जो झूठ बोलने में माहिर हों। मामा ऐसे लोगो को

खोज निकालते। कोई न मिलता तो दो रुपया पकड़ा कर झूठी गवाही दिला देते। बाद में शेरसिंह को सब कुछ मालूम तो हो गया था। लेकिन उस दिन मामा को जब कोई न मिला, उसने शेरसिंह को ही पकड़ लिया। पौड़ी दिखाने ले गए। दो रुपया जेब खर्च तब बड़ी बात थी। वह शेरसिंह को मिला।

गवाही देने से पहले वकील ने गवाहों को मजबूत करना था। उन्हें बताया गया कि कचहरी में हाजिर होकर क्या कहना है। शेरसिंह को जो बताया था वह वैसा बोल गया। पर दूसरा गवाह एकदम गड़बड़ कर गया। कचहरी के दरवाजे के अंदर कदम रखते ही उसका दिल धक् से बोल गया और गवाही देने तक उसने वहीं खड़े-खड़े पाजामे में पेशाब छोड़ दी। बाद में शेरसिंह के पूछने पर उसने बताया कि वकील ने मुझे झूठा पाठ पढा दिया था। मुझे मालूम था कि मैं झूठ बोल रहा हूं। सच को झूठ में बदलने का काम है। पेशाब नहीं छूटेगा तो क्या होगा।

मामा की जालसाजी का कोई अंत नहीं। इसलिए मामा उसके घर नहीं जाते। शेरसिंह का बाप उससे नफरत करता है। ऐसे आदमी का क्या भरोसा है। कहीं भी फांस के रख दे।

झूठ बोलने में जिन लोगों का पेशाब उतर आता था वे लोग अब तेज-तर्रार हो गए हैं। अब अंग्रेजी शासन नहीं है। इसलिए अब वे ही लोग कचहरी के आस-पास मंडरा रहे हैं। किसी को गवाह की जरूरत पड़ी कि झट से आ खड़े हुए।

"कितना लेगा ?" वकील ही सौदा कर लेता है।

तीन रुपया…दो रुपया…चलो, एक ही सही। पान-बीड़ी का खर्चा निकल आता है।

इस बार गांव वालों ने कोई गवाह खड़ा नहीं किया। फिर भी काफी रुपया लग गया है इस मुकदमे पर। इतने रुपये में एक दूसरा गोचर खरीदा जा सकता था, पर अब एक तरह से झगड़ा गोचर के लिए न होकर दोनों गांवों की इज्जत का सवाल बन गया है। गोचर की घास वाली जमीन में दूसरे गांव वालों ने डंगर छोड़ दिए। एकता कमेटी वालों ने उजर की, तो उन लोगों ने गोचर फूंक दिया। आग की लपटें रात-भर धधकती रहीं। सुबह उठकर लोगों ने देखा, एक तिनका घास न बच सका। सारे गोचर में जैसे राख बो दी है। इसके बाद मामला आगे बढ़ा। दोनों गांव गोचर के दावेदार बन गए। मुकदमेबाजी चल गई। धीरे-धीरे

गोचर की जमीन का मोह छूटा और अब ऐसी गांठ पड़ गई है कि खुलने मे नहीं आती। खसिया-ब्राह्मण की बात जो बीच मे आ गई है। चौरा गाव के खसिए और कोटि गांव के ब्राह्मण। मुकदमेबाजी के वक्त भी यही सवाल उठा। ब्राह्मण वकील किया तो ठीक तरह से मुकदमे की पैरवी नही करेगा। कोटि गाव के लोग उसके रिश्तेदार न सही, ब्राह्मण तो हैं। इसलिए गुमाई गुमानसिह को उन्होंने अपना वकील चुना। दूसरी तरफ से पंडित सुधीराम वकील आए। कचहरी में जब दोनों वकील लड़े, तो रुपयों का चकनाचूर…। बन्द गांठों मे खुल-खुलकर रुपया कचहरी की तरफ जाने लगा। मुकदमा लड़ने के लिए गाव में उगराई हुई। चंदे का पैसा खर्च हुआ, तो पंचायती रुपये से काम चलाया गया। पटवारी और उसके चाकर अब भी चक्कर काटते कहते हैं, "क्यो जी, ठंडे पड़ गए हो?" वकील जो चोखी रकम थमा गए है, वह अलग…। इतने पैसे मे स्कूल की एक बिल्डिंग बन सकती थी। मोटर सड़क खीची जा सकती थी। गांव का हुलिया बदला जा सकता था।

कचहरी के आस-पास ही मंडरा रहा है शेरसिंह। अपने वकील की तलाश है उसे। कोटि गाव का रूपराम भी आया होगा। शेरसिंह सोचने लगा, वह भी गांव का मुखिया है मेरी तरह, जमीन-जायदाद वाला आदमी है। फर्क इतना है कि वह ब्राह्मण है और मैं हूं खसिया जजमान। यह खसिया-ब्राह्मण की बात पुश्तों से चलती आई है। ब्राह्मण अपने को ऊंचा मानते हैं तो हम भी उनसे कुछ कम' है। रूपराम के पास सत्ताईस रुपये का हिस्सा है, तो साढे सत्ताईस रुपया किश्त मेरी भी जाती है। साठ बोरी मंडुवे की मंडाई अपनी भी होती है लेकिन इस वर्ष फसल मारी गई है। शेरसिंह सोचने लगा, जैसी 'बात' पड़ी थी, उस हिसाब से कम-से-कम आधी जमीन में हलचीरा लगाया जा सकता था। गाव वाले अपनी खेती बना रहे होंगे और यहां पड़े-पड़े रूपराम की छाती मेरी ही तरह छिल रही होगी।

सोच ही रहा था कि यकायक रूपराम की सूरत उसके सामने आ गई। उसके हाथ मे चिलम देखकर शेरसिंह के मुह मे पानी भर आया। चिलम न पाने के कारण कुछ भी अच्छा नही लगता। बढ़िया खाना खाने के बाद तुरंत चिलम न मिले, तो लगता है कुछ खाया ही नहीं। रूपराम को चिलम मुट्ठी में थामकर चलने की आदत है, भले ही उसका तंबाकू चुक गया हो। जाने-अनजाने चिलम

को मुंह लगाने की आदत जो पड़ गई है। लेकिन इस वक्त शेरसिंह देख रहा है कि चिलम में तंबाकू ऊपर तक भरा हुआ है। आग भी ताजी-ताजी रखी है। खालिस तंबाकू की गंध शेरसिंह की नाक तक पहुंच रही है। एक क्षण उसने चाहा कि रूपराम के हाथ से चिलम लेकर जोर की फूंक मारे। लेकिन ऐसा न कर सका वह। जेब से घोड़ामार बीड़ो निकालकर उसका पेट दबाने लगा।

एक भी ठीक तरह से नहीं भरी है स्साली···। कैसी धोखेबाज है यह पौड़ी। खरे तीन आने देकर साबुत बंडल खरीद लो और बीड़ियां ऐसी कि पेट में तंबाकू रत्ती-भर नहीं। बीड़ियों की तरह यह पौड़ी भी देखने में सुंदर है, पर पेट इसका भी खाली है। जेब में पैसा न होने से कोई पूछता नहीं। नाते-रिश्तेदार लोग यहां भी रहते हैं। देखते ही मुंह फेर लेते हैं। जब से मुकदमेबाजी चली है, तब से कितना रुपया डाल चुका है वह इस पौड़ी के पेट में। लेकिन इसका पेट है कि भरता ही नहीं। उधर अनाज की पैदावार घट रही है। घटेगी क्यों नहीं, कचहरी की पैदावार जो बढ़ रही है। इसके अलावा खसिया-ब्राह्मण का भूत सबके सिर पर बैठा है। इस भूत ने सबकी खोपड़ी चाट डाली है और जितने बाल बच रहे हैं उससे ज्यादा कर्ज की रकम बढ़ गई है, तिस पर भी ऐंठ नहीं जाती। नागा बाबा ठीक कहते हैं, गांव में एक बुराई हो, तो उसे जड़ से धोया जा सकता है, पर जहां कई तरह के टंटे हों, वहां आदमी झगड़े से कैसे बच सकता है।

दोपहर ढलने लगी है। अभी तक मुकदमे की सुनवाई नहीं हुई। रूपराम-शेरसिंह नाम की कोई आवाज चपड़ासी ने आकर नहीं दी। तीन घंटे से लगातार सूरज की किरणें गीली धरती पर हलचीरा चला रही हैं। गीली जमीन से उमस पैदा हो रही है और शेरसिंह को बैठे-बैठे पसीना चढ़ा आ रहा है।

शायद अभी आवाज पड़े। दोनों वकील एक साथ कचहरी के अंदर गए कि लौटकर नहीं आए। वकीलगीरी कोई मामूली पेशा नहीं है। कितनी लड़-झगड़ करनी पड़ती है। जोर लगाना पड़ता है, तब जाकर हार-जीत का फैसला होता है। फैसला सुनकर आज ही वक्त से घर पहुंचा जा सकता है और दो-चार खेतों में हलचीरा चलाया जा सकता है। रात को मानसरोवर की हजम न होने वाली रोटियों से पिंड छूटे तो अच्छा हो। दो जून की रोटियां वह घर से बांध लाया था, जिन्हें मानसरोवर की आधी कटोरी शोरवा के साथ वह खा गया और एक खाली चारपाई पर चार आना किराया देकर वहीं बरामदे में रात गुजार दी

थी। रात-भर बबूल की रस्सियों पर पीठ खुजाता रहा। नींद नहीं आई। बदन में जैसे चींटियां चर रही हों। चमचमाहट भी होती रही और सुबह जब उठा तो लगा कि सारा बदन चिर गया है। जैसे किसी ने हलचीरा चला दिया हो। वह सोचने लगा, कब फैसला हो और कब वह अपने घर का रास्ता ले।

कचहरी की आधी छुट्टी हुई। घंटे-भर के अंदर वकील और अफसर लोग कुछ खाएंगे, पिएंगे और उनके बाद फिर काम चालू होगा।

वकीलों ने बाहर आकर बताया कि अब इसके बाद सबसे पहले उन्हीं के केस पर कार्यवाही चलेगी। इतनी देर कुछ खा-पी लिया जाए। सोचकर शेरसिंह मानसरोवर की तरफ लौटा। सुनते हैं, दुनिया की कमाई ये कचहरी वाले खाते हैं और कचहरी वालों को इस मानसरोवर ने खाया है। मानसरोवर के बारे में रूपराम ने बहुत कुछ सुन रखा था। देखने की गरज से वह भी उस तरफ जा निकला। मानसरोवर की पहली सीढ़ी उतर कर रूपराम ने देखा, दोनों वकील एक साथ बैठे चाय-पानी कर रहे हैं। सिघोरियां खा रहे हैं। मालू के पत्तों से लिपटी खुशबूदार सिघोरियां। बराबर किसमिस, बादाम और नारियल के बुरादे से बनी ताजी मिठाई···। उन्हें आपस में इस तरह हंसते-खाते देख रूपराम को आश्चर्य हुआ। मानसरोवर की पहली सीढ़ी पर पड़ा हुआ उसका कदम ज्यों-का-त्यों जाम हो गया। वह सोच न सका कि अंदर चला जाए, या वापस लौट आए। उसने निश्चय किया, भीतर जाना बेकार है। अब तक की सारी मेहनत उसे बेकार लगने लगी। वह लौटना ही चाहता था कि चीना सामने आ पड़ा। बोला, "पंडत! वकीलों को चकाचक मानसरोवर मे दावत दिए जा रहे हो। अरे, कभी एकाध प्याला चाय हमें भी पिला दोगे, तो क्या हो जाएगा।"

सुनकर रूपराम हंस दिया। पगला है यह, लेकिन प्रेम की बात कहता है। चीना कभी-कभी पौड़ी के चक्कर लगा लेता है। राजधानी है न! लीडर लोग आते हैं तो गांव मे कहां टिकते हैं। बस, पौड़ी का चक्कर लगाया और वापस लौट गए। नेताओं की नगरी है पौड़ी। नैनीताल, मसूरी, शिमला···या फिर कुल्लू-काश्मीर। गर्मियों मे नेता लोगों की कान्फ्रेंस इन्हीं स्थानों पर होती है। पंद्रह-बीस दिन···भाषण और दूसरे कार्यक्रम चलते हैं और अंत में गजल-कव्वाली का दौर भी चल जाता है।

चीना भी अपनी तरह का नेता है। पौड़ी मे जो घूमता है, वही नेता बन

जाता है। पौड़ी के लोग चीना से कहते है, "नेताजी महाराज! पौड़ी में घूमते तो हो, पर पानी कब दिलवा रहे हो। यहां तो पानी के बिना सूखा पड़ रहा है।"

चीना कोई उत्तर नहीं देता। उत्तर किसी के पास नहीं है, इसलिए चुपचाप चल देते हैं। तब कोई आदमी चुपके से कहता है, "ये पाणी वाले नेता नही हैं भइ! ये नेता तो एकता वाले साम्यावादी हैं। सबको एक बराबर करने वाले हैं। ये पाणी की फिकिर क्यों करेंगे। पाणी देंगे तो कांगरेस वाले देंगे, जिनको तुम भोट देते हो।"

पौड़ी में सब तरह के नेता आते हैं। कोई साम्यवादी हैं, कोई क्रांति पार्टी वाले हैं, कोई दीया दिखाते हैं, पर पौड़ी को पानी देनेवाला कोई नही।

रूपराम मे एक प्याला चाय का तकाजा हुआ कि उसने चीना की बांह पकड़ ली और होटल की तरफ ले चला। "यार ब्यटा, आज तो जरूर तुझे चाहा पिलाऊंगा। तूने कब-कब मिलना है पौड़ी में। चाहा के साथ जो तेरी तबीयत हो, वह भी खा लेना। चल...।",

मानसरोवर से हटाकर रूपराम उसे बगल वाले होटल मे ले आया। बोला, "मानसरोवर मे नही जाएंगे, वह बड़े लोगों की जगह है।"

चीना को यहां की हर बात का पता है। वह जानता है कि इस वक्त मानसरोवर के भीतर दोनो पार्टियों के वकील बैठे हैं, इसलिए रूपराम उसे यहां ले आया है। वह रूपराम के आश्चर्य में पड़ने का कारण भी समझ रहा था। गांव के भोले चेहरो पर कौन-सी बात आसानी से नही उभर आती। उसकी मन बसी बात को चीना ने अंततः खोल ही दिया। बोला, "कका, मुझे सब मालूम है कि तुम लोग पौड़ी में एक पल नही ठहरना चाहते। पौड़ी अब पूरा शहर बन गया है। गांव के आदमी के रहने की यह जगह नही हैं। इस वक्त तुम्हारे वकील मानसरोवर में बैठकर मिठाइयां खा रहे है। हंस-खेलकर बातें कर रहे है। देखने से तो यही लगता है कि उनकी आपस में गहरी दोस्ती है। तुम्हारे लिए वे अपनी दोस्ती को बिगाड़ नही देंगे। देख लो, एक खसिया है, दूसरा है ब्राह्मण। लेकिन इस वक्त जैसे कि एक ही सिघोरी के दो हिस्से हों। यह झगड़ा तो सिर्फ हमारे-तुम्हारे लिए है। गांव वालों के लिए...। वकीलों का तो आपस मे कोई झगड़ा नही।"

रूपराम चुपचाप उसकी बातें सुनता रहा। चाय खत्म हुई और चीना वहां

से चलता बना। रूपराम भी बाहर आ सड़क के किनारे खड़ा हो सोचने लगा। चीना ठीक कह रहा है। वकीलों का आपस में कभी झगड़ा नहीं होता। आज भी वे एक ही मेज पर बैठे मजे से खा-पी रहे हैं. अपनी बातचीत में लगे हैं। उसकी समझ में नहीं आया कि यह कुछ क्या है। उसने चाहा, शेरसिंह भी उन्हें इस हालत में देख सके, तो कितना अच्छा हो।

मानसरोवर के बाहर जलनेवाली अंगीठीपर चाय का पानी हर वक्त खौलता रहता है। सांझ की पक्की आग और अंत तक न बुझने वाली चिनगारियों को देखकर रूपराम ने जेब से चिलम निकाली, उसे ऊपर तक तंबाकू से भरा और डरते-डरते थोड़ी आग मांग ली। थोड़ी सी आग भी शायद बिना पैसे के न मिले। हर चीज के लिए पैसा चाहिए। कचहरी का इलाका है, यहां किसी से कुछ पूछना हो, तो भी पैसा लगता है। पैसे के बिना कोई बात तक नहीं करता। जैसे कि मुंह में जुबान है ही नहीं। वह डर रहा था कि अंगीठी के पास खड़ा हुआ लौंडा कहीं आग देने से इनकार कर दे! लेकिन उसने पैसा लिए बिना ही दो-तीन चिनगारियां रूपराम की ओर फेंक दी। उस पक्की आग को चिलम के ऊपर चढ़ाकर रूपराम कचहरी के आगे आ बैठा और धीरे-धीरे चिलम का मजा लेने लगा।

मानसरोवर में एक प्याला चाय पीने के बाद शेरसिंह भी कचहरी के आगे आ खड़ा हुआ और बीड़ी निकालकर उसका पेट दबाने लगा। भादों की तपन ज्यों-की-त्यों बनी है, किरणें आग बरसा रही हैं। अभी वक्त है, दस-पंद्रह खेतों को आसानी से उलटा जा सकता है। लेकिन कैसे?

—मंडुवा न मिले इनके जन्म लेनेवालों को—वह मन-ही-मन गांव वालों को कोसता है। यकायक आखों में रूपराम की चिलम आ जाती है। देखकर मुंह में पानी भर आया। हां ध्वै···! वह धीरे-धीरे रूपराम की ओर बढ़ने लगा। शायद यह कहने के लिए कि आज के दिन पड़ने वाली यह 'बास' हमारे दिलों पर हलचीरा चलाने के लिए काफी है। इस वक्त हम लोग घर पर रहते, तो इस वर्ष भी अनाज की कमी नहीं थी। वह यह भी कहना चाहता है कि हम लोगों के यहां आने से कचहरी की पैदावार बढ़ती जा रही है और हर वर्ष मंडुवे की फसल घटती जा रही है और शायद यह बात कहना भी जरूरी है कि मानसरोवर में धोखे की खपत बढ़ गई है। अब वह चार आने वाली शोरबा प्लेट की कीमत

आठ आना लेने लगा है। इसके अलावा वह और भी कई एक बातें रूपराम से कहना चाहता है।

कुछ देर बाद वकील लोग जब लौटकर आए, तो उन्होंने वैसा ही कुछ पाया। शेरसिंह और रूपराम, दोनों में घुटकर बातें हो रही हैं। उन्हें आपस में चिलम का मजा लेते देख वकीलों का दिल जोर से धड़कने लगा। कचहरी की अगली कार्यवाही शुरू हुई। थोड़ी देर बाद रूपराम-शेरसिंह नाम से कचहरी के चपड़ासी ने आवाज दी। अपने-अपने वकील के साथ वे दोनों कलक्टर साहब के आगे पेश हुए। वकीलों की बहस शुरू हो, इसके पहले रूपराम-शेरसिंह ने आगे बढ़कर बयान दे दिए कि उन्होंने अपना फैसला स्वयं कर लिया है। कलक्टर साहब के पूछने पर उन्होंने बताया कि भादों के महीने ऐसी 'बात' पड़े तो किसान घर का मुर्दा बाहर निकालने के बजाय हलचीरा निकालकर खेत में पहले पहुंचेगा। हुजूर कलक्टर साहब! हम लोग दो दिन से यहां पड़े हुए हैं और गांव वाले अपनी खेती कमा रहे हैं, इसलिए हमने अपना फैसला स्वयं कर लिया है।

इस बार उनकी तरफ से राजीनामा लिखते हुए वकीलों को लगा कि दो दिन से वर्षा न होने और 'बात' पड़ जाने के कारण उनकी खेती का कोई हिस्सा सूख गया है। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि यकायक यह सब कैसे हो गया है!

इस घटना के बाद एकता कमेटी में आए हुए वकीलों ने अपना इस्तीफा कमेटी के अध्यक्ष के नाम लिख दिया और अलग हो गए। दूसरे लोगों में भी चर्चा होने लगी। इस तरह से कहीं एकता हुई है! यह चीना एकता और विकास की बात करता है, पर देखा जाए तो यह आदमी स्वयं इन बातों के विरुद्ध है। पहले की तरह गांव में अपनी न्याय-पंचायत कायम करने जा रहा है। बड़ी मुश्किल से नई हवा इन गांवों की तरफ फैल रही है और यह आदमी उसी पुरानी लीक को सबके सामने पीटता चला जाता है। उजाले के बजाय अंधेरी खाई की तरफ गांव को चला रहा है। यह पौड़ी की शान को मिटाकर रहेगा। पौड़ी प्रदेश की राजधानी है। यहां कोर्ट-कचहरियां हैं, स्कूल, कालिज और सरकारी दफ्तर हैं। इन सब चीजों के कारण खासी भीड़ रहने लगी है। गांव के लोगों ने अगर पौड़ी

आना छोड़ दिया, तो फिर हो गया पौढ़ी का विकास। एक तरफ पौढ़ी के विकास की योजनाएं बन रही हैं, दूसरी तरफ कोर्ट-कचहरी को खत्म करने की साजिश है। यह बात ठीक इसी तरह है जैसे कि प्रदेश-सरकार करोड़ों रुपया खर्च करके नशाबंदी कमेटियों की स्थापना करती है। एक तरफ लाखों रुपया नशाबंदी के खातिर लगाया जा रहा है और दूसरी तरफ शराब के ठेके भी दिए जाते हैं। सरकार ऐसा क्यों करती है, यह बात किसी की समझ में नहीं आती। लेकिन चीना का कहना है कि वक्त से सब कुछ समझ में आएगा। इन सब बातों पर बाद में विचार होगा और फिर जगह-जगह से शराब की भट्ठियों और ठेकों को खत्म करवा दिया जाएगा।

लोगों को सोचना चाहिए कि यह आदमी ऐसा क्यों कर रहा है। जरूर इसमें कोई बात है। हो सकता है, आने वाले चुनाव में उसका कोई विचार बना हो, जिसके लिए वह अभी से तैयारी कर रहा है। चुनाव वाले ही विकास की बात करते हैं। चीना इस प्रदेश का नेता बनेगा। वह समाज विरोधी तत्वों का विरोध करेगा और जनता के कमजोर पक्षों को मजबूत करने में उनकी सहायता करेगा।

यह आदमी चीन का एजेंट है, साम्यवादी पार्टी का आदमी है। इस पार्टी की नीति रही है कि धीरे-धीरे आदमी को काबू करते हैं और फिर एक दिन ऐसा विद्रोह खड़ा कर देंगे कि संभलना कठिन हो जाएगा।

लोगों द्वारा तरह-तरह की बातें उठाए जाने के बावजूद भी एकता कमेटी का काम पूरे जोर-शोर से चल निकला है। सदस्यों की संख्या भी पहले से ज्यादा हुई है। आस-पास और दूर के गांवों में भी लोगों ने एकता कमेटी के नियम-कानून को अपनाया है। अब तो एक 'महिला मंडल' की स्थापना भी हो गई है। महीने में महिला मंडल की दो बैठकों का विधान रखा गया है। मीटिंगों में महिलाओं की अपनी दिक्कतों के बारे में चर्चा होने लगी है। बिरजा बहू को 'महिला मंडल' की अध्यक्षा बनाया है। गांव-घरों की औरतों को बिरजा तरह-तरह की बातें सुनाती है। गांव और शहर का अंतर समझाती है।

एकता कमेटी में एकीकरण का प्रस्ताव भी कब से रखा हुआ है। लेकिन आज तक उस पर विचार नहीं हो पाया। एकीकरण के लिए कुछ और समय चाहिए। हर जाति, धर्म और दूसरे लोगों की रजामंदी जब तक न होगी, एकीकरण कैसे होगा। लोगों का विचार है कि एकीकरण होने से अधिकांश झगड़े अपने आप

मिट जाएंगे। बिखरी हुई जनशक्ति को एकजुट लाना जरूरी है। तभी गांवों का विकास संभव है। महात्मा गांधी अपने चेलों से यही कहते रहे कि भारत देश गांवों का देश है। यह देश तभी फूलेगा-फलेगा, जब गावों का विकास होगा। लेकिन गांधी बाबा की बात लोगों के दिमाग में तभी तक रही, जब तक वे जीवित रहे। उनके बाद नाम की महिमा चलती है। केवल नाम…।

उन बातों को बिरजा बहू मंडल की मीटिंग में सुनाती है। यह देखकर उसे आश्चर्य होता है कि लोगों ने गांधीजी का नाम तो सुना है, पर उनके कामों के बारे में किसी को कुछ पता नहीं। वे क्या चाहते थे और कैसे-कैसे काम उन्होंने किए हैं, आदि, बातें बताने वाला जैसे वहां कोई नहीं था। आज भी वे बातें किसी को मालूम नहीं है। धीरे-धीरे बिरजा की समझ में बात आई। गांवों में अब तक ऐसा ही चलता आया है। गांव के लोगों को सब कुछ समझाना जरूरी नहीं था। वे समझकर करते भी क्या? काम तो सभी शहर में होता है। शहर के लोग सब कुछ जानते हैं। गांव में केवल नाम का होना काफी है। नेता और प्रभु—दोनों का नाम स्मरणीय है। नाम को भजने से मतलब है। जब कभी वक्त आन पड़ा, कोई मुश्किल सामने आ खड़ी हुई, तो नाम का जाप कर, उसी में गांव के भोले प्राणी को सुख मिलता है। यही नाम की महिमा है।

कहते हैं कि यात्रा के दिनों में एक बार बुनियादी गुरुजी भी इस तरफ आए थे। उन्होंने जगह-जगह अपने भाषण में इसी बात को दोहराया था। कहा था कि शहर की कोई बुनियाद नहीं है और गांव अपनी बुनियाद पर अटल है। इसलिए गांव का विकास जरूरी है। लेकिन यहां तो बात एकदम उलट हो गई। शहरों का खूब विकास हुआ है और गांव में भजन-कीर्तन चल रहे हैं। नाम का गुणगान चल रहा है। शायद इसी से नैया पार लग जाए।

गांव की बहू-बेटियां जब शहर से लौटकर आती हैं और गांव में रहने वाली औरतों को वहां की बातें सुनाती हैं, तो बूढ़ी औरतों का मुंह आश्चर्य से खुला रह जाता है। शहरों में आरामदेह जीवन है। वहां ऐसे खेत-खलिहान नहीं हैं। घाट-पनघट, नदी, जंगल कुछ भी नहीं। औरतों को सुबह-शाम इतनी मेहनत नहीं करनी पड़ती। घास-लकड़ियों के लिए जंगल-जंगल नहीं दौड़ना पड़ता। शहरों में सब कुछ घर के अंदर ही मिल जाता है। यहां तक कि टट्टी-पानी के लिए भी बाहर नहीं निकलना पड़ता। घर के भीतर रसोई के पास, टट्टी वाला कमरा बना दिया,

जाता है, या फिर मकान की छत पर टट्टियां बनी हैं।

गाव के लोगों को यकायक इन बातो का विश्वास नही आता। ऐसा कैसे हो सकता है, पर जब आंखो देखी बातें सामने आ रही हैं, तो उस पर विश्वास कैसे नही हो। फिर गाव की औरतें हंसते-हंसते लोट पड़ती हैं। छि—कैसे लोग हैं, बाहर जाने का काम भीतर ही कर लेते हैं।

"इसमें घिरना की क्या बात है जी ! सारी बात तो विकास की है। गाव का विकास होगा, तो हमें भी घर के भीतर ही सब कुछ करना पड़ेगा। पर कहा हो रहा है गांव का विकास !"

महिला मडल की मीटिंग मे ये सब बातें चलती हैं। शहर की बात सुनने में मजा आता है। शहर से लौट आई हुई औरतों की बातों में सब दिलचस्पी रखते हैं। सुनकर लगता है कि शहर कोई दूसरी ही दुनिया है जहां आदमी बैठकर मजे ले सकता है। इतना परिवर्तन तो दूसरी दुनिया में ही पाया जा सकता है। सचमुच वह दुनिया, गांव की इस दुनिया से कितनी अलग है। गाव के लोग उस दुनिया को देखने के लिए कितने बेचैन हैं। उस दुनिया में रहने वाले लोग कैसे भले लगते हैं। आदमी इन पहाड़ों से निकलकर जाता है और देवता बनकर लौटता है। बहुत-सी बातें सीखकर आता है। बहू-बेटियां भी जाती रहती हैं, पर इन बूढ़ों को कौन उस दुनिया मे पहुंचाएगा ? क्या ये लोग वहां रहने-बसने के काबिल नही हैं ?

गांव की बूढ़ी औरतों के मन में जरूर कोई बात है। आखिर ख्याल आ ही जाता है, क्यो न हमको भगवान ने उसी दुनिया में पैदा किया, जहां आदमी को बैठे-बिठाए सब कुछ मिल जाता है। अब आखिरी वक्त आया है। बिना कुछ देखे-भोगे ही इस संसार से विदा ले लेनी है। सोच-सोचकर पश्चात्ताप ही बढ़ता है। तब वे नागा बाबा के धूने पर आ बैठती है।

नागा बाबा का कहना है कि बड़ी मुश्किल से प्राणी को मनुष्य जन्म मिलता है। लेकिन उस दुनिया को देख पाना शायद मनुष्य जन्म धारण करने से भी मुश्किल है। अपने-अपने भाग्य की बातें है। अपने भाग्य में यही लिखा है कि पैदा होने से मरने तक, गोठ का गोबर ही छानते रहो। मिट्टी में तन को खपाकर क्या मिलता है। घास-लकड़ी के लिए जगल-जंगल भटकते रहो, तिस पर भी भरपेट खाने को नहीं मिलता। सुख क्या होता है उसका अनुभव कभी नहीं पाया।

अपने दुःख को मन में रखकर गांव की औरतें बाबा के पास पहुंचती हैं। बाबा दूर-दूर तक घूम आए हैं। सारा जीवन घूमने-फिरने में बीता है। भली-बुरी सगत देखी है। मठ-मंदिर और तीर्थों का भ्रमण किया है। बाबा ने पुण्य कमाए हैं।

शिवरात्रि, संकट-चौथ या ऐसे ही पर्व-त्योहार के मौके पर गांव की औरतें बाबा के पास आती है। ऐसे पर्वों पर साधु-ब्राह्मण और अतिथि को भोजन कराना, दान-दक्षिणा आदि, गृहस्थ का धर्म है। दूसरे के हाथ का बना भोजन पाने में बाबा को आपत्ति नहीं, पर अपने हाथ से बना खाने का मजा ही और है। कच्चा भोजन, आटा, दाल, चावल, मिर्च, मसाले और दक्षिणा, सब कुछ बाबा के लिए वहीं पहुंच जाता है। दूध-घी की कमी नहीं रहती। तब कुछ दिन के लिए बाबा निश्चित हो जाते हैं।

गांव की औरतें धूने के आस-पास घेरा बनाकर बैठती हैं, "कोई कथा सुनाओ महाराज! संकट-चौथ का दिन है। कथा हो, जो संकट को काटने वाली हो।"

नागा बाबा धूने मे जल रहे भरकम ठेले को चिमटे से खुरचने लगते है। ठेले पर से बड़े-बड़े अंगार टूटकर झड़ पड़ते हैं और आग भड़क उठती है। ठेलों का मुख जोड़कर वे उसी पर पतीला-भर पानी रख देते हैं। समझने की बात है कि चाय-पानी के बाद ही कुछ सुनाएंगे।

बाबा लोग अपनी धुन के हैं। झोली से पत्तियां निकाल उन्हें हथेली पर अंगूठे से रगड़ते हैं। चाय तैयार होने से पहले चिलम भरकर वहीं ठेले के सहारे खड़ी कर दी जाती है।

ठेलों की तेज आंच में पानी उबलते देर नहीं लगती। बराबर दूध-पानी, चीनी-पत्ती मिलाकर उबाला जाता है। इतनी गाढ़ी चाय बाबा के पास ही मिलती है। ऐसा जायका कि क्या कहने···! चाय के साथ चिलम का जोड़···। छिलकों की आग पिसकर चिलम के ऊपर पड़ती है और फिर बाबा की चौकड़ी लगती है। सीना फैलकर आगे आता है—"बंम शंकर! खाने-पीने का ढंग कर···बैरी-दुश्मनों को तंग कर···। लूट ले उसी को···जो न दे किसी को···।

शिव शंभू···गिरा दे दुमहला लगा दे तंबू···।

लेना हो···ओ···ओ···ओ अलख! बंम···बंम···फुः!"—और पहली फूंक चिलम पर पड़ती है, तो हाथ-भर जोत लपक उठती है चिलम के ऊपर···।

पहली ही फूंक मे आंखें ब्रह्मांड भेंटने लगती हैं। लाल-लाल अंगार जैसी आखें।

चिलम चुक जाने पर माई-लोगों से कहते हैं, "अब कहानी सुनाता हूं। संकट मोचन वाली कथा सुनना चाहती हो न! सुनाता हूं। पर मेरी समझ में नहीं आता, कैसा संकट तुम लोगों के ऊपर आन पड़ा है?"

माई लोग-हंस पड़ती हैं। अब बाबा को चिलम लगी है। अब क्या कथा सुनाएंगे!

"संकट तो है ही महाराज! घर-गिरस्ती का ही संकट क्या कम है। इससे तो आप लोग ही भले हैं। न किसी से लेना-देना, न कोई झगड़ा, न कोई टंटा···। सब बातों से बेफिक्र हो बैठे हैं।"

सुनकर बाबा को ताव आ जाता है। माई-लोगों के बीच बाबा कुछ कह नहीं सकते। बाबा लोग कोई ऐसी बात कहते, तो झपट कर जवाब देते—तू भी क्यों नहीं आ जाता इस बेफिक्री में" सिर मुंडा के देख! कि इस भेष में कितना आराम है। इतना कहने में सकोच न था, पर माई-लोगों से क्या कहा जाए। बाबा उन्हें समझाते हैं कि ऐसी बात नहीं। मनुष्य रूप धर कर जो प्राणी इस धरती पर आया है वह किसी दु.ख से छूटा नहीं। सुख-दुःख कभी आदमी से अलग नहीं रहते। पर मैं पूछता हूं, सुख की ही खोज आदमी क्यों करता है? सब लोग सुख ही चाहने लगें, तो दुःख कहां जाएगा? अकेले किसके सिर बैठेगा। वह भी मानव-प्राणी के साथ आया है। तुम लोग देखते हो कि रात होती है, फिर दिन चढ आता है। रात के बाद दिन आता है, तो अच्छा लगता है। सोचो, अगर दिन ही दिन रहे, सूरज डूबे ही नहीं, रात कभी हो ही नहीं, तो तुम क्या करोगे?

सबके चेहरों पर बारी-बारी आखें जमाते हुए बाबा देखते हैं और अपनी बात का उत्तर चाहते हैं।

माई-लोगों के पास उनकी बात का कोई उत्तर नहीं। उनके मुख पर आश्चर्य है। जैसे वे सोचने लगी हैं कि सचमुच कभी ऐसा हो जाए, तो कैसे काम चलेगा।

"तुम कुछ नहीं कर सकते, कोई कुछ नहीं कर सकता।" बाबा उन्हें समझाते हैं। "जिसके हिस्से मे दुःख है, वह सुख कहां से पाएगा। दुःख या सुख कभी अकेला नहीं मिलता। जिस तरह दिन-रात है, वैसे ही दुःख-सुख है। हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश, सब साथ-साथ चलते हैं। ये सब चीजें जीवन में

एक बराबर लगती हैं। यह आदमी की अपनी बात है कि वह किस चीज को कैसे लेता है। तुम लोगों के पास दुःख को पहचानने के लिए आंखें है, शरीर है, सब कुछ है। पर सुख को पहचानने के लिए कुछ भी नही। है तो सभी कुछ। लेकिन पहचानने की कोशिश नही करते।

माई-लोगों को बाबा समझा कर कहते है कि यह जीवन एक अंधेरे समुद्र की तरह फैला है। इस फैले हुए अंधकार में उजाले की एक किरण को पैदा करना है, अंधेरे को उजाले में बदलना है। समुद्र की गहराइयो में घुसकर एक लहर को पकड़ना है। बस, इतनी-सी बात है।

सुख-दुःख कोई अलग चीज नही। अलग-अलग होते हुए भी एक ही है। क्योंकि एक का ज्ञान दूसरे से होता है। सोचो, अगर रात का अंधेरा न होता, तो दिन के उजाले का ज्ञान कैसे हो सकता था? दु:ख का दर्द नही मिले तो सुख का आनन्द कैसे लिया जा सकता है? इसके साथ यह भी निश्चित है कि समय बदलता है। ये पतझड़ के दिन है। पेड़-पौधो पर इन दिनों कोई पत्ता या फल-फूल नही दिखाई देता। लेकिन वसंत की बहार आने पर ये ही पेड कितने हरे-भरे और सुंदर लगते हैं। कैसी विचित्र लीला है उस प्रभु की···जो ऋतुओ के रूप मे आकर धरती का रंग बदल देता है। इस तरह परिवर्तन आता ही रहता है। हमेशा एक जैसा मनुष्य भी नही रहता। आदमी के साथ दुःख-सुख के रूप मे उसी की देन है। उस प्रभु की दी हुई चीज को हम घृणा से देखें, उसका निरादर करें तो यह हमारे लिए अच्छी बात नहीं। इसलिए हर चीज को एक बराबर मानकर चलें, तो दुःख नहीं होगा।

माई-लोगों के दिमाग में इन बातों को बिठाना बड़ी बात नही। ऐसी बातों को ये ध्यान मगन हो सुनती हैं और गांठ लगा लेती हैं। समझाना वहां कठिन है, जहां आदमी स्वार्थ से भरा है। स्वार्थ मन में है, तो दूसरी बात वहां नही जमती।

बाबा को चिलम लग गई है। लेकिन चिलम लग जाती, तो इतना भी नहीं कह पाते। चिलम से बाबा लोगों के भीतर ज्ञान फूटता है। चिंतन जगता है। अब सुन लो—बाबा से तरह-तरह की बातें।

लेकिन तरह-तरह की बातें माई-लोगों को सुनाने से क्या फायदा! इन्हे तो सुख की लगन लगी है, सुख चाहिए महाराज! कहीं थोड़ा सुख मिले!

कहां से आएगा सुख! सुख ऐसी चीज नही कि उठाकर किसी के हाथ में धर

दिया जाए। या दूध की तरह गिलास में फेंटकर पिला दिया जाए। वह तो जानने-समझने वाली चीज है। कहते हैं, गरीबी का दुःख है। गरीबी का दुःख है, तो अमीर लोग फिर क्यों दुःखी हैं। बड़े-बड़े सेठ-साहूकार, जमींदार, जागीरदार और राजे-महाराजों के पास धन की क्या कमी थी। लेकिन उन्हें भी सुख की तलाश में दर-दर भटकते देखा गया है। मन मे शांति पाने की इच्छा लेकर लोग इन तीर्थों की ओर आते है। हर वर्ष तुम लोग देखते हो, हजारों-लाखों की संख्या में यात्रियों का आना होता है। किसलिए? निःस्वार्थ भाव से कौन यहां आता है किसी-न-किसी दुःख-दर्द से टूटकर ही आना होता है। दुःख और मन की अशांति ही खींच लाती है। कुछ न सही, पुण्य और मोक्ष की इच्छा तो रहती ही है।

माई-लोगो को बाबा समझाते है कि मन मे इच्छा रखना ही दुःख का सबसे बड़ा कारण है। आदमी की इच्छा प्रबल होती है और वह पूरी नही होती। इच्छाएं कभी पूरी हो भी नही सकतीं। हां, अपनी शक्ति और समर्थ के मुताबिक यदि इच्छा बनती है, तो वह पूर्ण हो भी जाती है। लेकिन आदमी का स्वभाव है कि वह ऐसी इच्छाएं मन में रखता है जो उसकी शक्ति और समर्थ से कही ऊंची पड़ जाती हैं। मानव-प्राणी की इच्छाएं अनन्त आकाश की तरह फैलने लगती हैं, इसलिए उनके पूर्ण होने का सवाल ही पैदा नही होता। और यही बात उसके दुःख का कारण बन जाती है। इसलिए इच्छा नही रखनी चाहिए। जो मिलना है, वह अनिच्छा से भी मिल जाता है और उसी से सुख उपजता है—कहकर बाबा चुप हो जाते है।

माई-लोग बाबा की बातों को मन लगाकर सुनती हैं। "हां, महाराज! तो हम लोगों को क्या करना चाहिए?" बाबा लोगो को छेड़ना पड़ता है, तभी वे कुछ बोलते है। सब चाहते है कि बाबा कुछ-न-कुछ बोलते रहें।

बाबा अब कहने के मूड मे नहीं। कहते हैं—अब दूसरे दिन आओगी, तब बताऊंगा कि तुम लोगों को क्या करना है। पर माई-लोग मानती कहा हैं।

"कहां से सुख मिलेगा महाराज! कैसे मिलेगा?" बाबा चिढ़ जाते हैं। "सुख कही विदेशों से थोड़े ही आता है कि लाकर कोई तुम्हारे अंदर डाल दे। वह सब तुम्हारे अंदर ही है, वही से उपजता है। तुम्हें परमात्मा ने सभी कुछ दिया है। इतनी कीमती चीजें कोई किसी को नहीं देता। लेकिन उस प्रभु ने सबको दी हैं। ये दो आंखें हैं, कान हैं, हाथ-पैर, दिल-दिमाग...क्या नहीं दिया है। इनसे जैसा

बरतन करोगे, वैसा पा जाओगे। यह जिभ्या है। देखो कैसी चीज है। इससे कठोर वचन निकलेगा तो पिट भी सकते हो। मीठी बात निकलेगी तो लोग तुम्हारी पूजा करेंगे। तुम्हें मानेंगे और हर इच्छा पूर्ण होगी। इस तरह हर चीज के बरतने का तरीका है।

मन है, तो समुद्र से भी गहरा है यह मन। इसके अंदर हलाहल भी है और अमृत भी—। इसे जैसा बनाओगे, वैसा यह बनेगा। अमृत पीना चाहो, तो अमृत मिलेगा। इसी से आदमी बंधता है और यही मुक्ति का कारण बनता है। पर इन चीजों को समझता कौन है। झगड़ा इसी बात का है कि अपने पास पड़ी हुई दौलत को कोई नहीं देखता और बाहर लपकने की इच्छा रखते हैं। सब साले··· दुनिया-भर की बातें करते हैं। मोटर-गाड़ी और हवाई जहाजों में घूमते हैं। रूस, अमरीका, चीन-जापान, जाने कहां-कहां जाते हैं। आकाश-पाताल की खबर ले रहे हैं, पर अपनी खबर किसी को नहीं। अपनी जमीन पर कोई नहीं उतरता। अपने दामन में नहीं झांकता। बात करते हैं, दुनिया पर काबू पाने की—और घर में अपने बीवी-बच्चों पर काबू नहीं। अपने मन पर काबू नहीं। जो अपने आपको न समझ पाए, वह दूसरों को क्या समझेगा।"

इन बातों से बाबा का मन दुःखी हो जाता है। कहते हैं, "तुम लोगों को सुख चाहिए, तो पहले अपने को समझो। खुद को जानो कि तुम किस काबिल हो। सुख कोई बड़ी चीज नहीं है। सुख बड़ा भी नहीं होता। तुम्हारा मन ठीक है, तो यही सुख तुम्हें सूखी रोटी के साथ प्याज की चटनी में मिल जाएगा, जो एक बड़े आदमी को नाना प्रकार के पकवान में मिलता है। ऊंचे महल में रहने का सुख, झोंपड़े में टूटी खाट पर पड़े रहने से ज्यादा कुछ नहीं है। बड़ी चीज में बड़ा सुख नहीं। भूख सबको एक ही तरह की लगती है। भूख, प्यास, नींद और हंसी-खुशी सब एक ही तरह की चीजें हैं। कुत्ते-सूअर को कीचड़ में लोटने से वही सुख मिलता है, जो रेशमी गदेलों की गुदगुद में अमीर के बेटों को मिलता है। मेरा मतलब सुख को ग्रहण करने से है कि आदमी उसे कब और कहां से ले सकता है, यह बात उसकी समझ पर ठहरती है। दुःख-सुख किसी की बपौती नहीं है कि वह उसे रोककर अपने पास रख ले। पैसे की तरह एक जगह ठहरा ले। पैसा ही न हो, वह तो व्यापता ही है। उसकी कीमत पैसे से बढ़कर है, राज्य से बढ़कर है। शासन-सत्ता से भी ऊपर···।

जो लोग दूसरों की तरफ देखते है, वे अपना सुख भी खो जाते हैं। दूसरों के सुख से कोई सुखी नही हो सकता। दूसरों के सुख-दु:ख को अपने मे भरने वाले लोग भी है। लेकिन उनकी बराबरी हम लोग कर नही सकते। उनका अपना कुछ भी नही होता, या फिर सभी कुछ उनका अपना होता है। वे सब में अपने को पाते है और अपने में सब कुछ को···।

हम तुम लोग वहां तक नही पहुंच सकते। इसलिए छोड़ो···। ये सब बातें पागल बना देने वाली बातें है। तुम लोग जैसे हो, वही रहो। इसी में कल्याण है।"

कहते हुए बाबा अपनी चिलम उठा लेते हैं। और साफ करने में लग जाते हैं। माई-लोग अब उठकर जाने लगी हैं। बाबा की बातें सुनकर उदास मन सुख का अनुभव करता है। बाबा की बातें अंदर ही अंदर गूंजती रहती है।

गांव के लोग अब कुछ समझने लगे हैं। एक साथ मिल-बैठने से ही समझ आती है। चीना और उसकी एकता कमेटी के काम हैं। लोगों की नजरों मे चीना पहला आदमी है जो सबकी बात समझता है और जिसने लोगों को कुछ दिया है। गांव के दु:ख-दर्द को वह जानता है। इस दु:ख-दर्द को वही दूर कर सकता है।

बातें सब तरफ से फैलने लगी हैं। इस बार लोगों का ख्याल है, चीना को चुनाव मे खड़ा करने का···। वह नेता बन गया, तो समझो विकास ही विकास है। इन गांवों के लिए ऐसे ही लोगो की जरूरत है। एकता कमेटी ने एक-से-एक उदाहरण सबके सामने खड़े कर दिए है। लोग चाहते हैं कि इस तरह विकास के कदम बढ़ते रहे।

क्षेत्र में घूमने वाले राजनीतिज्ञों में अब कुछ हलचल पैदा हुई है। चीना की मेहनत और उसके काम खूब कारगर साबित हो रहे हैं। यही बात रही, तो सब कुछ हाथ से निकल जाएगा। वह झाड़-झंकाड़ की तरह सब चीजों का सफाया कर देगा।

इस बार चीना को कोई रोक नही सकता। लोगों ने अभी से उसे अपना नेता मान लिया है। उसे नेता बनाने की पूरी तैयारियां कर ली हैं। आदमी अपनी मेहनत से उठ रहा है। अपनी मेहनत से उठने वाले को कोई दबा नहीं सकता।

चीना को ये बातें पसंद नहीं। कौन लोग ऐसी बेकार बातें फैला रहे हैं। वह लोगों से कहता है कि ऐसी अफवाह न फैलाएं। नेता नेता ही होता है, तब तो वह आदमी भी नहीं रहता। नेता बनने के बाद कोई कुछ नहीं कर पाता। उन लोगों को करने-धरने की फुर्सत कहां मिलती है···। चीना लोगों से कहता है, पर लोग उसकी बात कहां सुनते हैं। चुनाव के लिए अभी वक्त पड़ा है। अभी से लोग आने लगे हैं, उसके कामों की प्रशंसा करते हैं। चीना को इन सब बातों से चिढ़ है। वह नेता नहीं बनना चाहता। कुछ दिनों से चीना लोगों से नहीं मिलता। मिलना ही नहीं चाहता, इसलिए कहीं चला गया है। लोग कहते हैं, पौड़ी की तरफ गया था। अभी लौटकर नहीं आया।

उसे गए काफी समय हो गया। इतने दिन से वह पौड़ी में क्या कर रहा है? ऐसा कौन-सा काम अटका है, जिसके लिए इतने दिन लगा दिए हैं। चीना की खोज में लोग पौड़ी पहुंचने लगे हैं। पौड़ी में कोई नहीं बताता कि वह कहां है। उन लोगों का कहना है कि बहुत दिनों से वह पौड़ी में दिखा ही नहीं।

कहां चला गया? लोगों की चिंता बन आई है। किसी से कुछ कहकर नहीं गया, तो गया कहां। लंबा समय बीतने आया है, चीना का कहीं पता नहीं। उसकी मर्जी के बिना नेता बनाने का यही फल है कि एक आदमी हाथ से निकल गया है। आज ही नामा बाबा उसे तलाश करके लौटे हैं। दूर-दूर तक हो आए हैं लेकिन उसका कोई पता नहीं। दयालजी साहब की परेशानी बढ़ गई है। इतनी बड़ी जिम्मेदारी उनके सिर डालकर वह चुपचाप कहीं निकल गया। यह अच्छा नहीं हुआ। एकता कमेटी के मेम्बर और दूसरे लोगों को इसमें कोई राज नजर नहीं आता है। चीना इस तरह से पलायन कर जाए, यह बात समझ में नहीं आती। बहुत देर के बाद पांडेजी को कुछ कहने का मौका मिला है। उनका कहना है कि जो आदमी ऐसा पलायनवादी है, वह कोई काम कैसे कर सकता है? एक जगह जमकर काम करने वाला आदमी ही कुछ कर पाता है। जिम्मेदारी न लेने वाले लोग पलायनवादी होते हैं। विकास की बात लोग करते हैं, पर वे नहीं जानते कि विकास तो अपने घर से ही शुरू होता है। आदमी पहले अपना विकास करे, तभी वह दूसरों का विकास करने योग्य बनता है। लेकिन जिसका घर-द्वार नहीं है, सिर पर कोई जिम्मेदारी नहीं, वह दूसरों की परवाह क्यों करने लगा। उसे दूसरे के विकास से क्या मतलब?

बात-बात में पांडेजी लोगों को समझाते हैं कि इस धर्म-परायण भूखंड का विकास खोदने से नही होगा। धर्म से ही यहां का विकास संभव है। लोगों की आस्था जब धर्म में होगी, साधु-सतो के प्रति सेवा-भक्ति का भाव मन में भरेगा, तभी विकास होगा।

पांडेजी आत्मा के विकास की बात पर जोर देते हैं। आत्मा-परमात्मा में कोई अंतर नही। अंतर है तो केवल समझने-सोचने का। चीना की प्रशंसा में उनका कहना है कि वह बाहरी विकास में यकीन रखता है। उसके मन मे भेदभाव नहीं। उसका कोई धर्म-कर्म भी नही, कोई नियम-बंधन उसके सामने नहीं था। इस तरह जो आदमी नास्तिक होता है, वह इस धर्म-परायण भूमि पर कैसे जम सकता है। अपने हिसाब से चीना ने जो किया, वह ठीक था। लेकिन अंत में आदमी जिस चीज को चाहता है, वह उसके पास कहां थी, उसमें आत्मज्ञान नहीं था। उस परमधाम तक पहुचने का मार्ग तो संत-समागम ही हो सकता है, जिसे चीना ने कभी नही अपनाया।

पांडेजी की बातें लोगों को जैसी लगें, पर इसमे झूठ नही कि अंत समय में आदमी मोक्ष की ही कामना करता है। चीना था जिसने कामना नहीं की, बल्कि जो चाहा, उसे पूरा कर दिखाया। काम करना जो जानता है वह कामना नही करता। चीना मे सभी कुछ था। इसलिए लोगों को उसकी तलाश है। सारे प्रदेश में उसकी चर्चा है। लोग उसे खोज लाने की हर संभव कोशिश में लगे हैं।

वसंत फिर लौट आया है। पेड़-पौधे और वनस्पतियों मे जीवन सरसने लगा है। शिशिर से पीड़ित किन्नर प्रदेश को कुछ राहत मिलने लगी है। छः महीने बर्फ और शीत-लहरों को झेलती हुई प्रकृति की कोमल काया को अब धीरे-धीरे शक्ति मिलने लगी है। अब अपना शृंगार रचने में धरती को किसी प्रकार का संकोच नही। फूल-पत्ते व वन-संपदा के रूप मे उसका पूर्ण सौंदर्य भड़क कर सामने आता है। आंखें इस सौंदर्य को देखती रह जाती हैं।

किन्नर नगरी के आस-पास जमने वाली बर्फ भी साफ हो चली। घनी उपत्यकाओं के पीछे ऊंचे पर्वत-शिखरों पर झूलती हुई बर्फ, किसी योगी की सफ़ेद जटाओं के मानिंद लगती है। समाधिस्थ मुद्रा में ये हिम-शिखर अपनी

भव्यता के कारण सभी को आकर्षित करते हैं। बाहर से आने वाले यात्रियों के लिए उनका यही भव्य रूप अध्यात्म बन जाता है और उनका चिंतन ही अध्यात्म चिंतन…।

प्रदेश में यात्रियों का आवागमन हो चला है। देवधाम बद्री-केदार के पट खुल गए हैं। भीड़ सर्वत्र उमड़ने लगी है। हर बार यही होता है। पुराने मठ-मंदिर और देवालयों को स्वच्छ, सुंदर और दर्शनीय बना दिया जाता है। प्रदेश में धर्माधिकारी, आचार्य, विद्वान, वैज्ञानिक सभी तरह के लोग मिल जाते हैं। चंदन, अक्षत-लिपे उन्नत ललाट पुजारी पंडों को देख, श्रद्धा के भाव मन में जगते हैं। यात्रियों के मार्ग-दर्शन में ये लोग तत्पर हैं। उनके लिए सब तरह की व्यवस्था जुटाने में लगे हैं। परंपरागत यही जीविका मिली है। भक्तों को भक्तिभाव के रास्ते पर लाने का काम सनातन से चलता आया है। यात्रा-काल प्रारंभ होने से अंत तक, किसी को फुर्सत नहीं मिलती। जजमानों को तीर्थों के दर्शन-लाभ करवाना और दक्षिणा प्राप्त कर वर्ष-भर की जीविका उपार्जन कर लेना, हर प्रकार से सुखद है। यहां खेती का काम मंद पड़ गया है। इसी को अपनी खेती मानकर तत्परता से लगे हैं। ऊंचे बर्फानी में जमीन कितना दे सकती है, इसलिए यात्रा-पर्यटन को ही अपनी खेती मान लिया है। यह खेती हरिद्वार से लेकर बद्री-केदार तक फैली हुई है। गंगोत्री, यमुनोत्री और गोमुख तक ही नहीं, कभी तो सारा देश ही अपनी खेती के समान लगता है।

त्रिनेत्र आश्रम वाले मैदान में यात्री उतरा कि वही नाम पूछ लिया और 'बही' निकाल कर आगे धर दी। आदिकाल से यात्रा पर आने वाले लोगों का नाम व वंश-परिचय इस 'बही' में देखकर यात्री आश्चर्य में पड़ जाता है। तब किसी तरह की दूरी आपस में नहीं रह जाती। देखकर यात्री वहीं बंध जाता है।

दुनिया के हर कोने का आदमी इस मैदान में सहज दिखाई देता है। दंड-कमंडलु और जटाजूटधारी संत-दिगंबरों के दर्शन-लाभ सर्वत्र होने लगे हैं। इस तरह यात्रा सबके लिए फलदायक है।

इस बार भगवान रतिनाथ के आश्रम में भी चहल-पहल दिखाई दे रही है। वहां भी यात्रियों का आना-जाना है। यह नई बात सबके देखने में आती है। सुनते हैं, वहां किसी संत ने आकर डेरा डाल दिया है। संतों की डगर है, जहां अच्छा

लगता है, वहीं रम जाते हैं। लेकिन यह कौन संत-महात्मा है ? किन्नर नगरी के इस बीहड़ भू-भाग में आसन बिछाने की हिम्मत किस मे है ? यह आश्रम वर्षों से सूना पड़ा है। भक्तों को छाया देने वाले भगवान रतिनाथ स्वयं नीले आसमान के नीचे विराजमान हैं। किसी खास पर्व पर ही आस-पास के गांव की स्त्रियां रतिनाथ के दर्शन करने जाती हैं और धूप-बत्ती दिखाकर तुरंत ही वापस हो लेती हैं। आश्रम मे अकेले पहुंच पाने की हिम्मत किसी में नही दिखती। चारों ओर गुंथी हुई झाड़ियां और घने जंगल से घिरा हुआ यह प्रदेश, आतंक ही मन में खड़ा करता है।

इन आश्रमों से संबंधित अनेक कथाएं प्रचलित हैं। गांव से किसी बूढ़े आदमी के पास बैठकर सुना जाए, तो सारा इतिहास सामने आ जाता है। बूढ़े लोग बताते हैं कि पुराने समय में यहां एक महात्मा हुआ करते थे। वह पुजारी बाबा नाम से प्रसिद्ध थे। उनके किस्से-कहानियां आज भी लोग दिलचस्पी के साथ सुनते हैं। भगवान रतिनाथ के आश्रम मे तब कुछ नही था। अपनी ही तपस्या के बल पर पुजारी बाबा यहा रहे। पुजारी बाबा ने ही आकर इस स्थान को उजागर किया। भगवान रतिनाथ के ऊपर छाया करने के लिए एक छत बनवा दी। अपने रहने के लिए एक कमरा और एक छोटी धर्मशाला भी तैयार करवाई।

पुजारी बाबा बूढ़े थे। लेकिन साहस की बात है। जब तक रहे, अकेले ही इस आश्रम मे रहते रहे। तब उनके कारण लोगों का आना-जाना रहता था। दूर-दूर से लोग इस सिद्ध-पीठ पर आते। भगवान रतिनाथ की तत्काल फलदायक भक्ति के साथ-साथ उन्हें बाबा की संगत प्यारी थी। लेकिन वे सब बातें कितनी पुरानी पड़ गई हैं। अब तो न वह कमरा है, न बाबा ही रहे। धर्मशाला के खंडहर भी शेष नही रह गए। देखकर विश्वास नही होता कि कभी कोई प्राणी इस जगह रहा होगा।

उस रतिनाथ आश्रम में किसी संत-महात्मा के आसन जमाने की बात लोगों के आश्चर्य का कारण बनी है। यदि ऐसा है, तो अच्छी बात है। यह उजड़ा देवस्थान फिर से बसेगा। साधु-संत और गुणीजन आकर ठहरेंगे। कुछ ज्ञान-ध्यान की चर्चा होगी। वृद्धजन—जो संसार के भोगों को प्राप्त हैं उनकी आध्यात्मिक वृत्तियों को समाधान मिल सकेगा।

लोगों का विचार है कि यह सब-कुछ तो होगा, पर मन मे एक ही आशका.

है कि इस बीहड़-वियाबान मे कोई टिक सकता है ? बड़े-बड़े महात्मा-जन, त्रिपुंडधारी, जटाजूट-अवधूत यहां आए और इसी आश्रम को उन्होने अपनी साधना के उपयुक्त माना। उनका दावा था कि वे यही रहेंगे और आश्रम के उद्धार का कार्य पूर्ण करेंगे। पर्वों पर यत्र-तत्र लगने वाले मेले-उत्सवों का आयोजन भी रतिनाथ आश्रम में हुआ करेगा। ऐसी बातें वे लोग साहस के साथ कह तो देते लेकिन एक ही रात में उनका यह दावा गलत सिद्ध हो जाता और अगले दिन वे भाग खड़े होते। कोई संत-महात्मा इस जगह क्यों नही टिक पाता, कारण अज्ञात है।

नए आगंतुक के दर्शनों की इच्छा सबके मन मे है। यहा आश्रम जमाने वाला कोई सिद्ध योगी ही हो सकता है। पांडेजी इस महात्मा के दर्शन कर आए है। प्रदेश में आने वाली नई मूर्ति के दर्शन पाने की पहल पांडेजी को छोड़ दूसरा नही कर पाता। कहते हैं कि दर्शनों से पुण्य-लाभ होता है। जाने कब किस वेष में नारायण मिल जाते हैं। लोगों से कहते है कि वह नकली साधू नही है। कोई सिद्ध महात्मा हैं। देखने में भी सुंदर। खूब घनी दाढ़ी और गेरुवा ओढ़े है। बातचीत से लगता है कि वाणी मे सरस्वती बास कर चुकी है। पांडेजी नाम पूछकर आए हैं। अपना नाम आचार्य आनंद स्वामी बताया है।

मैदान में इस बार त्रिनेत्र आश्रम द्वारा विशेष कार्यक्रम की व्यवस्था चलाई गई है। चुनाव का समय भी निकट आया है। इस धर्म-प्राण भूमि की जनता अब धर्म से विमुख होती जा रही है। धर्म धुरी समाप्त होती जाती है। धर्म से ही विकास संभव है। सुना है, इस बार त्रिनेत्र आश्रम की ओर से देश के सभी धर्म-प्रचारकों को बुलाया गया है। 'सर्व धर्म-सम्मेलन' का आयोजन किया है। यात्रा-काल के अंतिम चरण तक इस मैदान में कार्यक्रम चलते रहेंगे।

अगले दिन त्रिनेत्र आश्रम द्वारा आयोजित कार्यक्रम में आचार्य आनंद के प्रवचनों की सूचना पाकर लोग प्रसन्न हुए। ऐसे संतों की वाणी से पुण्य-लाभ करवाने का काम, आश्रम वाले ही कर सकते है। ऐसा समागम अन्यत्र कहीं नहीं होता। भजन, कीर्तन, कथा-प्रवचन और अखंड-पाठ चलते ही रहते हैं।

दूसरे दिन का प्रातःकालीन कार्यक्रम शुरू हो गया है। आज का दृश्य ही कुछ और नजर आने लगा है। सुबह-सुबह यात्री टूट पड़े है। किन्नर नगरी और दूर-दूर के गांवो के लोग भी आए हैं। देश-विदेशों के लोग, धर्म और संस्कारों में,

पले हुए लोग…। नई-पुरानी विचारधारा और विभिन्न जाति-धर्मों के लोगों से पांडाल खचाखच भर गया। आरंभ में महामहोपाध्याय गौरीशंकरजी का व्याख्यान हुआ। विषय था 'जीव और ब्रह्म'। जीव क्या है और वह ब्रह्म में कब, कैसे लीन होता है। विषय बड़ा गहन था, इसलिए पंडितजी को लगातार तीन घंटे तक बोलना पड़ा। संत, योगी और विद्वज्जनों के बीच 'जीव और ब्रह्म' की चर्चा उठाना साहस की बात है, किंतु गौरीशंकरजी की सूझबूझ और पांडित्य ने श्रोताओं का पूर्ण समाधान किया। उनके प्रवचनों से सभी संतुष्ट हुए। तदुपरांत एक भजनानंदी भक्त ने निर्गुण-सगुण भक्ति का स्वरूप जनता को समझाते हुए सूरदास और कबीर की वाणी से चुन-चुनकर भजन सुनाए। इसके बाद आचार्य आनंद के आने की सूचना भक्तजनों को दी गई। आचार्य आनंद को देखने की उत्सुकता सबकी आंखों में विद्यमान है। सबकी नजरें विशाल सुसज्जित मंच की उस पीठिका पर केंद्रित हैं, जहां से महामहोपाध्याय गौरीशंकरजी उठ गए थे और अब आचार्य आनंद आकर बैठने वाले थे।

एक पतली चादर का कोना कंधे पर चढ़ाते हुए वह नवयुवक संत मंच पर आ विराजमान हुआ। लोगों ने देखा, ये ही आचार्य आनंद स्वामी हैं। इस वेषभूषा में आचार्य को तृप्ति की अनुभूति होती है। सिद्ध पुरुषों की पहचान है कि उनके मन-प्राणों की सुंदरता स्वभावतः शरीर में भी दृष्टिगत होने लगती है। आचार्य के मुख-मंडल पर फैलती हुई तरुणाई और आंखों में छलकता हुआ कुतूहल—हजारों आंखों को बरबस अपनी ओर खींचने लगा। ऐसे अवसर पर बीना की बातें याद आती हैं। संत-महंतों की पहचान वह करती थी। उसका कहना है कि इन जोगी-जोगटों की आंखों में जादू होता है। अपनी आंखों में चमत्कार पैदा कर ये लोग दूसरों को वश में कर लेते हैं। इस तरह आदमी को वश में करना अच्छी बात नहीं।

इस आचार्य ने भी पहली नजर में लोगों को वशीभूत बना दिया है। जन-समूह की तरफ एक बार अपनी प्रश्नवाचक नजरों से देखा और पलकें धीरे-से आंखों पर झुक आईं। समाधिस्थ मुद्रा में एक श्लोक का सस्वर पाठ किया और फिर एक बार अपनी विहंगम दृष्टि का जादू जन-समूह की ओर फेंका।

अपने प्रवचन में पंडित गौरीशंकरजी ने जिस विषय को विद्वतापूर्ण ढंग से लिया था, उसी विषय को आचार्य ने व्यावहारिक-रूप प्रदान किया। उन्होंने तीन

बातें श्रोताओं के सम्मुख रखी।

भगवद् प्राप्ति क्या है ? किन लोगों को भगवद् प्राप्ति हुई है और जिन्हें यह प्राप्ति हो चुकी, वे कहां है ?

इन प्रश्नों की विशद् व्याख्या आचार्य ने अपने प्रवचनों मे आरंभ कर दी। उनका कहना था कि यदि श्रोतागण धैर्य की वृत्ति बनाए रखें, तो वे एक ही प्रश्न पर महीनो तक अपना प्रवचन कर सकेंगे। लेकिन इतने लंबे समय तक यात्रियों का वहा बने रहना सभव न होगा, जानकर आचार्य ने सक्षेप मे ही बहुत कुछ समझाने की प्रवृत्ति अपना ली। उनकी वाणी में ओज था। भाषा संतुलित और शब्द-शब्द से आत्मविश्वास टपक रहा था।

तीन घंटे तक अपने धारा प्रवाह व्याख्यान में आचार्य को स्वयं भी आनंद आने लगा था। श्रोताओं की तन्मयता को देखते हुए उनके बोलने का उत्साह बढ़ता ही गया। अध्यात्म के पीछे भौतिकता का प्रबल समर्थन ही आचार्य को अभीष्ट था। जिसे उन्होंने एक चौथे प्रश्न पर अंतिम रूप दिया। वह चौथा प्रश्न था—किन्हीं विभूतियों को भगवद् प्राप्ति होती है, सभी को नही। आचार्य का कहना था कि सभी भक्तजनो को भगवद् प्राप्ति होनी चाहिए। यदि ऐसा नही है, तो एक व्यक्ति की अपनी ही उन्नति का हमारी दृष्टि मे कोई मूल्य नही है। अपना विचार है कि जीवन में सामूहिक रूप से जो प्राप्ति होती है, वही उत्तम है। किसी वस्तु को प्राप्त करने वाला यदि स्वयं ही उसका उपभोग करता है, तो दूसरों की दृष्टि में उसका क्या महत्त्व हो सकता है ? महत्त्व तभी है जबकि उसका लाभ दूसरे लोग भी ले सके। तभी उस वस्तु को प्राप्त करने वाले की महानता को स्वीकारा जा सकता है।

अपने प्रवचनों को बनाए रखते हुए आचार्य बोले—मेरी दृष्टि मे वे लोग धन्य हैं जिन्हें भगवद् प्राप्ति की इच्छा नहीं है और जो संसार मे आने के बाद अपने उन कर्त्तव्यों का पालन करने मे तत्पर हैं जो जीवन को उन्नत और समर्थ बनाते हैं। जीवन में सामर्थ्य लाने की प्रक्रिया का नाम ही साधना है, वही सबसे बड़ा तप है और उसकी फल-प्राप्ति को ही मोक्ष कहा गया है।

जो लोग उपासना मे डूब गए है वे किसी काम के नही रह जाते। उपासना का चरम लक्ष्य भी अंततः किसी इच्छित वस्तु की प्राप्ति ही है। भक्ति का चरम लक्ष्य मुक्ति को प्राप्त करना है। मुक्ति की इच्छा रखना भी एक प्रकार से लोभ

को संवरण करना है। लोभ से क्रोध की उत्पत्ति है, क्रोध से काम और काम से मानव-प्राणी हमेशा दुःखी हुआ है। इसलिए इच्छा धारण करना सब प्रकार के सुखों से वंचित हो जाना है।

जीवन मे ज्ञान की आवश्यकता है। ज्ञान के बिना मुक्ति संभव नही और ज्ञान की उपलब्धि बियाबान जंगलो, मठ-मंदिरों या गिरि-गह्वरों के एकांत वास मे नही है। विश्व का विविध जन-समुदाय ही ज्ञान का अक्षय भंडार है। हम उस ज्ञान को प्राप्त करें। हमारा रास्ता गांव और शहरो का हो। संघर्ष और अभावों का हो। विभिन्न बाधाओं और विकट परिस्थितियों से घिरा हुआ हो। तभी हमें अपने जीवन मे सहज ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है और वही ज्ञान मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर सकेगा।

आचार्य के धारा प्रवाह भाषण पर श्रोतागण मुग्ध हो उठे। आचार्य द्वारा अध्यात्म प्राप्ति के सहज मार्ग-दर्शन ने जनता की परंपरागत विचारधारा को छिन्न-भिन्न कर जैसे नया मोड़ दे दिया हो। अध्यात्म की जड़ता को तोड़ एक नया विचार श्रोताओं के मन में प्रवेश कर गया।

धीरे-धीरे पांडाल खाली होने लगा। लोग अपने घरों की तरफ लौटने लगे। कुछ लोग वही मंच के पास आ जमा हुए। मंच से उतरते ही उन्होंने आचार्य को घेर लिया। भक्तों ने दंडवत् किया। बूढ़े महात्माओं ने सस्नेह आशीर्वाद दिया। स्त्रियां दूर से ही इस संत को प्रणाम कर सकीं।

कुछ देर बाद आचार्य चलने लगे, तो एक विशिष्ट जन-समुदाय उनके पीछे हो लिया। भक्ति-भाव से प्रेरित, उनके आचार्यत्व पर मोहित, भक्तगण पीछे-पीछे चले जा रहे हैं।

बीहड़ वन-प्रांत में ऊबड़-खाबड़ पगडंडियों वाली तंग घाटी को पार करके ही रतिनाथ आश्रम में पहुंचा जा सकता है। एक ओर अलकनन्दा के किनारे एक समभाग मे भगवान रतिनाथ खुले आसमान के नीचे विराजमान है। नदी के उस पार का किनारा जब सामने पड़ता है, तो कटी-फटी चट्टानें और गहरी अंध-दरारें ही दिखाई देती हैं। इन चट्टानों की नीव को कुरेदती हुई यह नदी कब से प्रवाहमान है। बरसात में पानी का तीव्र बहाव चट्टान की जड़ों को खाली कर जाता है। इस पुण्य सलिला ने धरती के वक्ष पर अनेक दृश्य अंकित कर दिए हैं। घाटियों को अपने में बांधती हुई वह स्वयं दृश्यों मे बदल गई है। पृथ्वी पर

नानाविध इसके रूप-स्वरूप का गुणगान है। भक्ति-भाव मन मे लेकर इसके तट पर बैठा हुआ योगी, अपनी साधना को सफल हुआ मानता है। आचार्य लोग अपने प्रवचनों में इसकी महिमा का वर्णन करने से नहीं चूकते। त्रिविध तापों को दूर करने वाली इसकी पावनता को कौन नही जानता। जीवन को इस पानी से उपमानित किया जाता है। पानी की तरह जीवन भी प्रवाहमान है। पानी पवित्र है, जीवन भी पवित्र हो सकता है, किंतु बहने मात्र से यह जीवन, पानी की समता को कैसे पा सकता है। इसलिए जीवन की तुलना नदी से नही। प्रदेश में अनेक रूप और नामो को सार्थक करती हुई यह नदी सनातन बहती आई है और मानव-प्राणी के विश्वास को पूर्णता के अनंत सागर में ले जाकर छोड़ देती है। इस पुण्य सलिला के कारण प्रकृति का रूप सज-संवर उठा है। इस किनारे दूर तक फैले हुए खेतों की हरियाली और जंगली फूलो की शोभा मन को उतना ही आश्वस्त करती है। लगता है, धरती का यह समस्त सौंदर्य और इससे इतर सभी कुछ पानी की तरह प्रवाहमान है जो अपने दोनों किनारों से खेलता हुआ बहता जा रहा है। जैसे कि उसे चलते ही जाना है। दिशा, काल और सीमाओं मे बंधकर भी वह निर्बंध है, उसे किसी का बंधन स्वीकार नहीं।

आचार्य भी इस पानी की तरह बंधनमुक्त हैं। आश्रम में पहुंचकर लोगों ने पाया कि एक शिला पर आसन बिछा है। एक समुद्री नारियल का जल-पात्र और आपस मे लिपटी हुई दो पुस्तकें वहीं पास में पड़ी हैं। इसके अलावा कोई तीसरी वस्तु वहां नही है।

आचार्य अपने आसन पर जा बैठे। बैठने से पूर्व भक्तजनों को बैठ जाने का विनम्र संकेत दिया। सबके यथास्थान बैठ जाने पर आत्मीयता के साथ निवेदन करते हुए बोले—"मुझे यहां तक पहुंचाने का आप लोगो ने जो कष्ट किया है उसके लिए आपको धन्यवाद ही दे सकता हूं। यह भगवान रतिनाथ की कृपा का ही फल है कि आप जैसे श्रद्धालु और विनम्र आत्माओं का सहज स्नेह मुझे प्राप्त हो रहा है। लेकिन यहां इस स्थिति में, मैं आप लोगों की क्या सेवा कर सकता हूं। अभी किसी प्रकार की व्यवस्था यहां नही बन पाई है।"

आचार्य की वाणी से भक्तजन पुलकित हो उठे। उनमें से एक व्यक्ति ने बोलने का साहस किया, "आप ही हमें सेवा का अवसर दें महाराज! हमारे बड़े भाग

हैं कि आप जैसे विद्वान-जन इस भूमि में पधारे हैं, किन्तु आपने ऐसा स्थान चुना है जहां इच्छानुसार आपके दर्शन सुलभ नहीं हो सकते। उचित तो यही था कि आप किन्नर नगरी में विश्राम करते और हमें योग्य सेवा का अवसर देते।"

सुनकर आचार्य बोले, "किन्नर नगरी—यह नाम मुझे प्रिय लगा है। यह नाम जितना प्यारा है उतने ही प्रिय यहा के बासी हैं। जीवन की सादगी में मेरा विश्वास है, इस प्रदेश में आकर वही देख रहा हूं। चाहता हूं, ऐसे लोगों का संपर्क रहे।"

कहकर आचार्य चुप हो गए। भक्त लोग आपस में बातचीत करने लगे। अब थोड़ी देर बाद संध्या उतर आएगी। घाटियों के बीच संध्या का अवतरण अपने-आप में एक दृश्य बनता है। कालेवन की ऊंचाई वाले भाग पर सूर्य की किरणें शनैः-शनैः मंद पड़ती जा रही हैं। भक्तजन बैठे हैं। उनकी आंखें बार-बार उस स्थान को टोह रही हैं, जो कभी एक कमरा और धर्मशाला के रूप में था। देखकर पहली बात यही मन मे आती है कि आचार्य के रहने के लिए एक कमरे का यहां होना जरूरी है। अभी इस संबंध में कोई बात उठी नहीं। लेकिन बहुत-सी बातें अपने आप बन जाती हैं। वातावरण में सारा कुछ समझा देने की सामर्थ्य है। स्थान का यह वातावरण सबके सामने था, जिसने भली प्रकार यह बात लोगों के सामने रख दी कि रहने की व्यवस्था वहां होनी चाहिए। व्यवस्था के अभाव में वहां कोई टिक न पाएगा।

कुछ समय बैठे रहने के बाद भक्त लोग उठकर चलने लगे। आचार्य भी नदी की ओर उतर गए। एक गहरे जलाशय मे ऊंचाई से पानी गिर रहा था, उसी के किनारे जा खड़े हुए। ऊंचाई से गिरने वाला पानी अपने गुरुत्व के कारण गहरे पैठ जाता और फिर फेन के रूप मे ऊपर आकर आधे जलाशय पर फैल पड़ता। इसी क्रम को आचार्य तन्मय हो देखते रहे। मानो पानी के ऊपर बिखरने वाले बुलबुलों के रूप मे जीवन-लीला दिखाई दे रही हो। देखते रहे और अंत में हंसी छूट आई।

बीतती हुई घड़ियों मे सन्नाटा और गहरा होता जा रहा है। तापमान अभी अनुकूल है, लेकिन रात मे वह गिर सकता है। घाटी का वह शांत कोना अपने पूरे प्रभाव में है।

चिट्…चिट्…चिट्…चिट्…तिलचट्टों की यह कैसी आवाज है। तने के

रंग से एकाकर झींगुरों ने मिलकर रात का संगीत छेड़ दिया है···झन्···झनन्··· झन्···झन्···झनन्···झन्···। उसकी झनकार और पानी के स्वर ने मिलकर अंधकार का करुण संगीत पैदा कर दिया है। हां, अंधकार का···जो उजाले की मृत्यु का साक्षी है। वही संगीत इन घाटियों में बजता है। इन अंधेरी घाटियों में जीवन एक फूल की तरह खिलता है और झड़ जाता है। एक प्रकाश की किरण फैलती है और अंधेरी तहों में बंद हो जाती है।

अंधकार के इस ऐकांतिक संगीत को कौन सुनता है, इन सर्वाधिक मूक क्षणों का साक्षात्कार कौन कर सका है। इस महाशून्य में मन की वृत्तियां रह-रहकर चंचल हो उठी है। ऐसे वातावरण में मन की स्थिरता संभव नहीं है। तब एक ही प्रश्न बार-बार सामने आता है। सोचते हैं आचार्य ! मैं यहां किसलिए आया हूं ? कौन-सी प्रेरणा लाई है मुझे यहां ?

प्रश्न अकेला नहीं। इसके साथ हजारों प्रश्न जैसे उठ आए हों। लेकिन मन में उठनेवाले इतने प्रश्नों के उत्तर किसके पास हैं।

यकायक कुछ दूरी पर रोशनी का एक गोला आचार्य की आंखों में चमक उठा। प्रकाश का वह पुंज भड़कता-बुझता-सा इसी ओर बढ़ता आ रहा है। ऊंचे पहाड़ और गहरी घाटियों वाली इस धरती पर देवताओं का धाम बताते हैं। भूत-प्रेत भी इन्हीं अंधेरों से उपजे हैं, यहां प्रकाश भटक रहा है, भय और संकोच से सिकुड़ गया है।

कुछ देर बाद आचार्य ने पाया कि हाथ में लालटेन थामे नागा बाबा सामने खड़े हैं। देखकर वह मन-ही-मन मुसकरा दिए। शंकित मन को धैर्य मिला। बोले, "पधारिए महाराज ! कैसे कष्ट किया ?"

बाबा ने आचार्य के चेहरे पर आंखें जमा दीं और फिर उत्सुक हो बोले, "तुम्हारे आचार्य-रूप के उदार दर्शन आज पहली बार सबने किए हैं। देखकर विश्वास होता है कि आदमी जितना दुर्बल और निरीह है उससे कहीं अधिक समर्थ और शक्तिमान है। ऐसा आदमी धन्य है। लेकिन अब हम लोगों पर कृपा करो महाराज ! एकता कमेटी के सामने कई संकट आन पड़े हैं। दयालजी साहब के सिर सारी जिम्मेदारी आ पड़ी है। लोगों को डर है कि एकता कमेटी द्वारा किया गया संगठन कहीं बिखर न जाए।"

अपरिचित भाव चेहरे पर लाते हुए आचार्य बोले, "कौन दयालजी साहब !

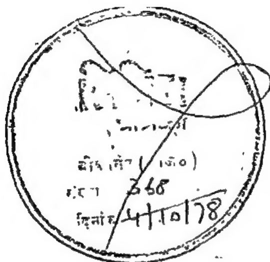
कैसी एकता कमेटी ? यह आप क्या कह रहे हैं, मेरी समझ में नहीं आता ?"

नागा बाबा कुछ देर मौन बने रहे। फिर उनका विश्वास दृढ़ हो आया। इस रूप में भी चीना को पहचानना बड़ी बात नहीं थी। मुसकराकर बोले, "अब ज्यादा बनने की कोशिश न करो। अपना काम तुमने पूरा कर लिया है। त्रिनेत्र आश्रम द्वारा फैलाई जाने वाली आध्यात्मिक जड़ता को तोड़ने के लिए ही तुम भाग निकले थे न ! जनता को विकास का रास्ता दिखाने के लिए भरसक कोशिशें तुमने कीं। लेकिन उसे रास्ते पर लाने का काम अभी बाकी है। आज सबको तुम्हारी जरूरत है। इसीलिए रात में लेने आया हूं, ताकि किसी को मालूम न होने पाए।"

नागा बाबा ने पहचान लिया, तो चीना भी खुलकर सामने आया। बोला, "महाराज ! अभी कुछ दिन रुक जाइए। आप लोग ही कमेटी का काम देखें।" फिर कुछ क्षण रुककर बोला—"मैं अभी लौट न सकूंगा। अब इस आश्रम को चेतन करके ही लौटूंगा। त्रिनेत्र आश्रम वाले भी अब विकास की बात करने लगे हैं। आश्रमों से ही विकास होता है, तो हर आश्रम को चेतन करना होगा। धरती के हर कोने को जगाना होगा। ताकि हर चीज दुरुस्त होकर सामने आए। बराबर सबको अवसर मिले, शक्ति और सामर्थ्य मिले। दूसरे को घटाकर अपने को कोई बढ़ाना चाहे तो बढ़ा नहीं सकता। दूसरों को रोककर स्वयं आगे बढ़ना, विकास क्रम में शामिल नहीं है। इसलिए साथ-साथ खुलने दो सारा कुछ…। लहर को आने दो उसमें हम भी बहें, आगे बढ़ें और सबसे ऊपर निखर कर आएं। वही सच्चे अर्थों में विकास माना जाएगा। यही विकास की कसौटी है। ऐसा विकास कभी रुकता नहीं, रुकेगा भी नहीं…।"

नागाबाबा स्तब्ध खड़े हैं। जैसे फिर से नई दीक्षा ले रहे हों। चीना की बातों से लगा कि वह लौटने वाला नहीं। चुपचाप उसकी बातें सुन लेने के बाद अंत में बोले, "यही तुम्हारी इच्छा है, तो करो…जैसा मन में आए। एकता कमेटी अब कमजोर नहीं रह गई। जनता सब कुछ समझने लगी है। इसलिए तुम रहो। जैसा मन में आए…करो।" कहते हुए नागा बाबा ने मुसकान-भरी नजर से चीना को देखा, विदा मांगी और वापस लौट आए।

□□


368
4/10/78

'पूर्वोदय' के श्रेष्ठ उपन्यास



बिन उद्गम के स्रोत (दो खंडों में)	निर्मल कुमार
अनाम स्वामी	जैनेन्द्र कुमार
जयवर्द्धन	"
यामा	"
अनन्तर	"
मुक्तिबोध	"
सुखदा	"
विवर्त	"
व्यतीत	"
त्यागपत्र	"
परख	"
सुनीता	"
कल्याणी	"
अन्धी आग	सुमंगल प्रकाश
अमलतास	शशिप्रभा शास्त्री
मिट्टी का पुतला	कालिन्दीचरण पाणिग्राही
केरलसिंह	का० म० पाणिक्कर
भयभीता	मू० ले० स्टीफन ज्वाइग, रूपा० दिलीपकुमार
अन्तर्कथा	बल्लभडो माल
आरुणी	निर्मल कुमार